विक्षुब्धमनः स्थिति एवं प्रेत-योनि

लेखक

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

डॉ० प्रणव पण्ड्या एम० डी०

प्रकाशक :

युग निर्माण योजना

गायत्री तपोभूमि मथुरा

तुर्थ बार　　१९९३　　मूल्य : ६-०० रुपया

विषय सूची

परोक्ष की झलक झाँकी-भूत, प्रेतों के माध्यम से

आत्मसत्ता जिस प्रकार चेतन शक्ति एवं पदार्थ सम्पदा के समन्वित रूप में बताई जाती रही है, समष्टिगत ब्रह्माण्डव्यापी सत्ता को भी जड़ प्रकृति एवं ब्राह्मी-चेतना के समुच्चय के रूप में समझा जा सकता है। यह परोक्ष जगत वस्तुतः उस विराट् पुरुष की ही अनुकृति है जिसका दिग्दर्शन कभी राम ने कौशल्या एवं काकभुशुण्डि को तथा कृष्ण ने यशोदा एवं अर्जुन को दिव्य चक्षु देते हुए कराया था। इस विशाल महासागर में अपरिमित पदार्थ एवं अनन्त चेतन सम्पदा समाई हुई है। सारा सृष्टि का व्यापार व्यष्टि और समष्टि की मिली भगत से ही चलता है। परमाणु के सूक्ष्मतम कणों एवं तरङ्ग-क्वाण्टा समुच्चय से लेकर ब्रह्माण्ड के अनेकानेक सौर मंडलों से बने प्रकृति जगत के विशाल कलेवर को सृष्टा का स्थूल शरीर कहा जा सकता है। यह भौतिकी की परिधि में आता है। विधाता का एक सूक्ष्म शरीर भी है जिसमें वे कार्य कारण, क्रिया-प्रतिक्रियायें घटाते रहते हैं जिन्हें प्रत्यक्ष क्रिया-कलापों के लिए उत्तरदायी माना जा सकता है। सृष्टि में समय-समय पर घटने वाले घटना-प्रवाह, आकस्मिक न समझ में आने वाले परिवर्तन, भूतकाल के क्रिया-कृत्य एवं आगत का स्वरूप इस सूक्ष्म शरीर में ही विद्यमान होता है। इसे सूक्ष्मदर्शी द्रष्टा ही देख या समझ सकते है। प्रकृति का यह चेतन अविज्ञात पक्ष ऐसा है जिसे मनुष्य अभी अपनी आत्मसत्ता की ही भाँति जान नहीं पाया है।

इस परोक्ष जगत में ही सूक्ष्मीकृत दिव्यात्मायें, प्रेत-पितर विषाणु इत्यादि निवास करते हैं। यह स्वयं में एक अनोखी दुनिया

है। काया रूपी चोला त्यागने के बाद नया जन्म प्राप्त होने की स्थिति तक मनुष्य को इसी दुनिया में सूक्ष्म रूप में परिभ्रमण करना पड़ता है। लोक-लोकान्तरों, स्वर्ग-नरक आदि की चर्चा मरणोपरान्त अनुभूतियां व पुनर्जन्म की घटनाएँ जो सुनने में आती हैं वह इसी अदृश्य जगत का लीला-सन्दोह है। इसे कौन देख पाता है, इस सम्बन्ध में महाभारत के अश्वमेध पर्व में एक उल्लेख आता है।

यथान्धकारे खद्योतं लीयमानं इतस्ततः।
चक्षुष्मन्तः प्रपश्यन्ति तथा च ज्ञान चक्षुषः॥
पश्यन्त्येवंविधं सिद्धा जीवं दिव्येन चक्षुषाः।
च्यवन्तै जायमानं च योनि चानु प्रवेशितम्॥

अर्थात्—"जिस प्रकार आँख वाले व्यक्ति अन्धेरी रात में जुगनू को यत्रतत्र उड़ते-फिरते देखते हैं, उसी प्रकार दिव्य दृष्टि सम्पन्न सिद्ध पुरुष अपने दिव्य चक्षुओं द्वारा जीवों का शरीर त्यागना, उनका पुनः धारण करना तथा दूसरी योनि में प्रवेश करना यह सब भलीभाँति देख व जान सकते हैं।"

यह प्रसंग यहाँ विशेष रूप में इसलिए उल्लेख किया गया कि प्रेतों का स्वरूप समझने के लिए सूक्ष्म जगत की जानकारी होना भी उतनी ही अनिवार्य है। यदाकदा हर किसी पर किसी का प्रेत आने, आवेश आने के जो प्रसंग सुनने या देखने में आते हैं, उनमें वास्तविकता का अंश बहुत कम होता है। वस्तुतः यह विद्या गुह्यविद्या का एक अङ्ग है, कोई हँसी-मजाक का खेल नहीं। इसलिए इसे उतनी ही गम्भीरता से समझने का प्रयास किया जाना चाहिए जितना कि आत्मिकी की किसी भी शाखा के लिए प्रयास पुरुषार्थ किया जाता है।

पूर्वात्त—दर्शन के अनुसार इस ब्रह्माण्ड में सात लोक हैं। नीचे से ऊपर क्रमानुसार स्थूल – भौतिक जगत, शक्ति प्रधान—काम जगत, मनस् जगत, बुद्धि, निर्वाण, अनुतदक एवं आदि जगत। इनका आम-

वचनों में उल्लेख मिलता है। प्रत्येक के सात उपलोक एवं इन उप-लोकों के सात-सात पुर्नविभाजन बताये गये हैं। आदि तथा अनुतदक लोक मात्र अतिमानवी शक्तियों की पहुँच में आते हैं, जबकि अन्य पांच लोक अन्तरिक्ष का ही एक अङ्ग होने के कारण मानवी पहुँच में हैं। दृष्टा ऋषियों द्वारा रचित साहित्य के अनुसार प्रत्येक लोक मे विशेष प्रकार के प्राणी निवास करते हैं एवं उनकी शारीरिक संरचना अलग-अलग होती है। इन लोकों में दिवंगत आत्माएँ, सूक्ष्म रूप में अपना समय बिताती हैं एवं जहां तक सम्भव हो, प्रत्यक्ष जगत के जीवधारियों की सहायता करती एवं वातावरण का परिशोधन करती हैं।

अध्यात्म—दर्शन के अनुसार जीवित या दिवंगत आत्माओं में से किसी को भी यह अनुभव नहीं होता कि पारस्परिक सम्पर्क कैसे साधा जाय ? ऐसे प्रयत्न असफल होने पर कई प्रेतात्माएँ सूक्ष्म शरीर में रहती हुई ही अनगढ़ क्रिया-कलापों में सतत् संलग्न रहती हैं। इनसे भयभीत न होकर इनसे सम्पर्क साधने हेतु तत्परता दिखाना अधिक श्रेयस्कर है। मरणात्तर जीवन सम्बन्धी भारतीय धर्म के कर्मकाण्ड इसी उद्देश्य हेतु कराये जाते हैं। इसके अतिरिक्त यह भी सर्वथा सत्य है कि अध्यात्म विज्ञान इतना सामर्थ्यशाली है कि आत्मबल सम्पन्न व्यक्ति दोनों लोकों के बीच सद्भाव एवं सहयोग का द्वार खोल सकते हैं। साथ ही विक्षुब्ध मन:स्थिति में भ्रमण कर रही प्रेता-त्माओं को शान्ति भी दिला सकते हैं। आत्मिकी का मरणोत्तर जीवन प्रसंग इसी कारण भलीभांति समझने की देव संस्कृति में प्रेरणा दी जाती रही है।

शास्त्रमत है कि मरण समय में विक्षुब्ध मन:स्थिति लेकर मरने वाले अक्सर भूत-प्रेत की योनि भुगतते हैं। स्वार्थी अपनी अतृप्त कामनाओं की पूर्ति के लिए उस प्रकार के घटनाक्रमों के इर्द-गिर्द मंडराते रहते हैं और शरीर न होने पर भी वे इच्छित स्वभाव के

अनुरूप जहां वातावरण दीखता है, वहां पहुँचते है। जिनसे अपनी मित्रता या शत्रुता रही है, उन्हें लाभ-हानि पहुँचाने का भी जो कुछ प्रयास बन पड़ता है, उसे करते रहते हैं। इन्हें प्रेत स्तर का कहा जाता है। परमार्थ परायण आत्मायें कष्टपीड़ितों की सहायता करने आ पहुँचती हैं और 'अदृश्य सहायकों' की भूमिका निभाती हैं। किन्हीं को प्रेरणा देकर उनके शरीरों से वह काम करा लेती हैं, जिसे करने के लिए उनकी परमार्थ भावना उमड़ती है।

मृत्यु को हम एक प्रकार की नींद की उपमा दे सकते हैं। दिन भर जागते हुए, कठिन परिश्रम के बाद मनुष्य जब सोता है तो उसे विश्राम मिलता है। इस निद्रा काल में तरह-तरह के स्वप्न आते रहते हैं। सूक्ष्म शरीर का सचेतन मस्तिष्क सो जाता है या निष्क्रिय पड़ जाता है और अचेतन का ही जीव सत्ता पर आधिपत्य रहता है। अचेतन में जैसे भले-बुरे संस्कार दबे पड़े रहते हैं वे उभर कर आते हैं। मरणोत्तर जीवन, मृत्यु के बाद पुनः जन्म लेने के बीच की अवधि भी इसी प्रकार जीवात्मा का विश्रांति काल है। उस अवधि में जिसने जीवन का अधिकांश भाग दुर्भावनाओं और दुष्प्रवृत्तियों में गुजारा है, उसे उसकी प्रतिक्रिया ही भयावह दृश्यावली के रूप में दिखाई देगी। इसी अनुभूति का नाम नरक है। जिन्होंने श्रेष्ठ जीवन जिया है, उत्कृष्ट चिन्तन और आदर्श कर्तृत्व अपनाते हुए जिन्दगी का अधिकांश समय बिताया है उनके अचेतन में दिव्य संस्कार जगे रहते हैं और वे उसके मरणोत्तर निद्राकाल में दिव्य स्वप्न बनकर उभरते हैं। उस सुखद स्वप्न श्रृंखला को ही स्वर्ग कहते हैं।

मरने के बाद, शरीर छोड़ने के उपरान्त जिन्हें गहरी निद्रा नहीं आती, बेचैनी बनी रहती है, उन्हें प्रेत स्तर का समय गुजारना पड़ता है। मरने के बाद स्थूल शरीर का तो अन्त हो जाता है किन्तु सूक्ष्म शरीर यथावत् बना रहता है। प्राणी अपने आपको लगभग उसी

स्थिति में, उसी काय कलेवर में अनुभव करता है, जिसमें वह जीवित अवस्था में था। अन्तर मात्र इतना ही होता है कि इन्द्रियों के स्पर्श से जो प्रत्यक्ष स्पर्श का सुख मिल सकता था, वह नहीं मिलता। सूक्ष्म इन्द्रियाँ तरह-तरह के स्वादों का अनुभव तो कर सकती हैं; परन्तु वे पदार्थों का उपभोग नहीं कर सकतीं, जैसा कि स्थूल शरीर रहने पर किया जा सकता है। संसार के पदार्थों एवं व्यक्तियों को वह देखता तो है परन्तु स्वयं वायुभूत होने के कारण किसी को दिखाई नहीं देता। पैर या पंख न होने पर भी वह चल और उड़ सकता है। दूसरों के शरीर तथा मस्तिष्क में अपना प्रवेश कर सकता है और उसे अपने अस्तित्व का आभास, आवेश या अनुभव के रूप में दे सकता है। वह बातचीत, वाणी या भाषा के द्वारा तो नहीं कर सकता, पर किन्हीं व्यक्तियों या पदार्थों के माध्यम से अपनी बात प्रकट कर सकता है।

प्रेत अवस्था में जीवित स्थिति की अपेक्षा कुछ कमियाँ आ जाती हैं किन्तु उसके साथ ही कुछ विशेषताएँ बढ़ भी जाती हैं। इन सब बातों का प्रमाण प्रेतों के अस्तित्व अथवा उनके क्रिया-कलापों के आधारों से मिलता है, जिनकी यथार्थता तथ्यों की कसौटी पर कसे जाने मे सर्वथा सत्य सिद्ध हुई है। अब तक प्रेतों के अस्तित्व का मात्र अन्ध-विश्वास समझा जाता था किन्तु ऐसी कई घटनाएँ और अनुभव प्रामाणिक व्यक्तियों के साथ घटे जिनकी विश्वसनीयता पर सन्देह नहीं किया जा सकता।

प्रेत-योनि की प्राप्ति के दो मुख्य कारण होते हैं—पहला प्रबल आकांक्षाओं की अतृप्ति। दूसरा— तृष्णा वासनाओं की तीव्रता। प्रबल आकांक्षा की व्यक्ति-चित्त में प्रचण्ड प्रतिक्रिया होती है। दैनिक जीवन में भी यह देखा जाता है कि जब कोई नवीन योजना दिमाग में होती है तो उसकी सुनिश्चित रूपरेखा बनने तक मन मस्तिष्क चैन से नहीं बैठ पाता, नींद नहीं आती है। ऐसी आकांक्षा खण्डित हो जाने पर

कई-कई रातों तक लोगों की नींद उड़ जाया करती है। यही बात तृष्णा के बारे में है। तृष्णा से व्याकुल लोग न शान्त रह पाते, न आराम कर पाते, न सो पाते। जब तक तीव्र तृष्णा की कुछ पूर्ति नहीं होती, वे उद्विग्न ही बने रहते हैं। प्रेत योनि भी ऐसी ही उद्विग्नता और अशान्ति से भरी जीव-दशा का नाम है जो मरणोत्तर स्थिति में होती है।

जिनके प्रति मृतात्माओं को विशेष लगाव होता है, उन्हें सताने के स्थान पर उनकी तलाश करती व सही तरीके से अपने आप को प्रस्तुत कर ऐसे कार्य उनसे पूरे कराती है जिनसे उन्हें भी शांति-मुक्ति मिले एवं वह व्यक्ति भी लाभान्वित हो।

दो वर्ष पूर्व कोटा (राजस्थान) में एक ऐसी ही घटना घटी। रामलखन पिठौर गाँव का एक समृद्ध किसान था। जून का महीना था। दिन में काफी तेज गर्मी पड़ती, जिसका असर रात को भी बना रहता। रात इतनी गर्म होती, कि कमरे में नींद नहीं आती। इसलिए रामलखन अपने पत्नी-बच्चों सहित घर की छत पर सोता। एक रात जब वह गहरी नींद में सो रहा था, तो पास ही किसी के कराहने की आवाज से उसकी नींद उचट गई। आँखें खुलीं तो छत पर उससे कुछ ही दूर एक लहू-लुहान व्यक्ति खड़ा दिखाई पड़ा, उसका सिर फटा हुआ था और रक्त अविरल बह रहा था। इससे उसके सारे कपड़े खून में सन गये थे। इस वीभत्स दृश्य को देख भय से वह चीख पड़ा। पास ही उसके पत्नी और बच्चे सो रहे थे। गुहार से सभी जग पड़े। पत्नी ने कारण पूछा, तो रामलखन ने सारा हाल कह सुनाया, परन्तु तब तक वह दृश्य गायब हो चुका था। पत्नी ने इसे उसका भ्रम समझा और सो जाने को कहा। उस रात फिर कोई असामान्य नहीं घटा। दूसरे दिन आधी रात को फिर वही दृश्य दिखाई पड़ा। पत्नी ने मन का भ्रम कह पुनः उसे सुला दिया। तीसरी रात भी वही

घटा। इस प्रकार यह क्रम पाँच दिनों तक चलता रहा। छठवें दिन किसी कारणवश उसकी पत्नी अपने बच्चों समेत कमरे में ही सो गई। अकेला रामलखन ही छत पर सोया। मध्यरात्रि के करीब फिर वह आकृति प्रकट हुई। इस बार उसने रामलखन को नाम लेकर पुकारा। वह जगा किन्तु लगातार छः दिनों से उसका साक्षात्कार होते-होते रामलखन का भय कुछ कम-सा हो गया था। साहस बटोरकर उसने प्रश्न किया—'तुम कौन हो और क्या चाहते हो ?' आकृति ने जवाब दिया—'मैं किशुन हूँ। कभी मेरा यहाँ मकान था। वर्षों पूर्व एक बरसात में मकान ढह गया और मैं उसी के नीचे दब गया। तभी से मुझे आपका इन्तजार था। मैंने ही यह जमीन खरीदने के लिए आपको प्रेरित किया। अब जब आपने इस जमीन को खरीदकर मकान बना लिया है, मैं आपके सामने उपस्थित हूँ। मेरी मदद कीजिए। मुझे उस स्थान से बाहर निकालिए। बहुत पीड़ा हो रही है। इसके बदले में मैं आपको अपार सम्पदा दूँगा।'

आकृति की गिड़गिड़ाहट पर रामलखन को दया आ गई। उसने पूछा—'आखिर मुझे करना क्या होगा ?' किशुन नामधारी उस आकृति ने पुन. कहा—सामने वाले कमरे के बाँये कोने में मैं दबा पड़ा हूँ, वहाँ खोदकर मुझे मुक्त करो।' आकृति के आदेशानुसार रामलखन तत्क्षण उठा तथा कमरे का कोना खोदना प्रारम्भ किया। करीब दो फुट खोदने पर उसे एक बाम्बी नजर आयी। बाम्बी के दीखते ही प्रेत के कथनानुसार उसने और खोदना बन्द कर दिया। दूसरे दिन अर्धरात्रि को किशुन फिर आया। उसने सहायता के लिए रामलखन को धन्यवाद ज्ञापन किया एवं एक स्थान का पता बताया। वहाँ खोदने पर रामलखन को ढेर सारे सोने-चाँदी के सिक्के मिले। बाद में उसने जब किशुन के बारे में लोगों से पूछताछ की, तो इसी नाम के एक

व्यक्ति का पता चला, जो वर्षों पूर्व उस मकान के गिरने से दबकर मर गया था।"

वस्तुतः स्वभाव के अनुसार प्रेत भी अच्छे-बुरे नाना प्रकार के हुआ करते हैं। सच्चरित्र निरीह व्यक्ति मोहादि के कारण प्रेतयोनि प्राप्त करके भी किसी का अनिष्ट अथवा हानि नहीं करते हैं, किन्तु जो मनुष्य स्त्री या पुरुष जीवित अवस्था में ही दुष्ट प्रकृति के होते हैं, वे मृत्यु के अनन्तर प्रेतयोनि प्राप्त करने पर-अपनी दुष्टता से बाज नहीं आते हैं। इसी श्रेणी के प्रेत मनुष्यों को भय दिखाते हैं, अत्याचार करते हैं, दूसरों पर आक्रमण करते हैं और नाना प्रकार के उपद्रव करते हैं। परन्तु ये सब उपद्रव दुर्बल हृदय मनुष्यों के ऊपर ही प्रभाव डाला करते हैं। आत्मबल सम्पन्न, उन्नत मन के सदाचारी एवं पवित्र स्त्री-पुरुषों को प्रेत कुछ भी हानि नहीं पहुँचा सकता है। प्रायः स्त्री या बालक पर ही प्रेतों का आक्रमण देखा-सुना जाता है क्योंकि इन दोनों में मानसिक भावनाओं की स्वभावतः प्रधानता हुआ करती है, ज्ञान की प्रधानता नहीं रहती। नीच प्रकृति के दुष्ट प्रेत जिस पर आक्रमण करते हैं, उसको आत्महत्या कर डालने के लिए भी प्रेरणा करते हैं, जिससे वह मरने के बाद उन्हीं की योनि में आ जाए। आत्महत्या करके प्राण त्याग करने वाले प्रेतों में आत्म हत्या करने की अन्तिम प्रवृत्ति प्रबल रूप में रहती है, इस कारण वह दूसरों को भी उसी के लिए प्रेरित करता है। विक्षुब्ध, अशान्त उद्विग्न जीव अपने विक्षोभ और उद्विग्नता के ही विस्तार की धुन में रहते हैं। विक्षोभ प्रेरित प्रेतों का जीवन बड़ा ही दुःखमय होता है। क्योंकि जिन वासनाओं के कारण प्रेतयोनि की प्राप्ति होती है, प्रेतयोनि में उनकी कमी नहीं होती, किन्तु वे और भी प्रबल हो उठती हैं। अतः प्रेत अपनी उन वासनाओं को आधार वस्तुओं को पाने एवं भोग करने के लिए सदा लालायित रहता है परन्तु उस योनि में उन वस्तुओं का वह

यथेष्ट भोग नहीं कर सकता, इस कारण निराशा की अग्नि में वह दिन-रात जला करता है। मोह-मुग्ध प्रेत सदा पत्नी-सन्तति आदि के साथ मिलकर जीवित अवस्था की तरह रहना चाहता है, यह सुविधा न मिलने से वह बड़ी यन्त्रणा भोगा करता है। कभी-कभी प्रेत अपने प्रियपात्र उन व्यक्तियों को मारकर अपनी योनि में लाना चाहता है, एवं इसके लिये चेष्टा करता है। उस चेष्टा में कृतकार्य न होने से भी वह हताश होकर बड़ा दुःख पाता है। कभी कोई पुरुष अपनी प्रथम पत्नी को मृत्यु होने के बाद दूसरा विवाह करता है, ऐसी दशा में यदि उसकी प्रथम पत्नी को प्रेतत्व हुआ हो एवं मृत स्त्री की आसक्ति अपने जीवित पति पर हो जैसा होना स्वाभाविक है, तो वह अपनी सपत्नी की ईर्ष्या में दिन-रात जला करती है और वह अपने पति के पास स्वयं आना चाहती एवं सौत के साथ पति का विच्छेद कराने की यथासाध्य चेष्टा भी करती है। जिस घर में दम्पत्ति रहते हैं, उसी में वह प्रेतयोनि प्राप्त स्त्री भी रहने की चेष्टा करती है। इसी प्रकार आजीवन धन संचय करके जो कृपण धन के मोह से प्रेत होते हैं, वे भी घर के जिस स्थान में उनका धन रहता है, वहीं सदा रहने की चेष्टा करते हैं, वह धन ले जाने का प्रयत्न करते हैं एवं उस प्रयत्न में कृतकार्य न होने पर हताश होकर बड़ी वेदना भोगते हैं। ऐसे ही व्यभिचारी पुरुष प्रेतयोनि में जाकर अपनी व्यभिचार वासना का परित्याग नहीं कर पाते, इस कारण ऐसे प्रेत परस्त्री या ऐसी प्रेतनी परपुरुष के साथ अपनी नीच वासना चरितार्थ करने की चेष्टा करती है। प्रेतों की इस प्रकार की कामासक्ति के अनेक प्रत्यक्ष प्रमाण सुने गये हैं। प्रेत जिस पुरुष या स्त्री पर कामासक्त होता है, बहुत समय उसे मार डालने का भी प्रयत्न करता है और प्रेत निवारक मन्त्र-औषधि आदि के द्वारा परास्त एवं निराश होकर दुःख से मर्माहत होता है।

प्रेत योनि अज्ञानमय होने के कारण बहुत समय तक यह समझ भी नहीं पाता कि उसके अन्तःकरण में क्यों इतना दुःख का दावानल जल रहा है और क्यों उसका दुःख शान्त नहीं होता। अज्ञान से विमोहित चित्त वाला प्रेत यों ही दुःख से व्याकुल होकर पागलों की तरह इधर-उधर दौड़ता रहता है हृदय क्या चाहता है, यह भी वह नहीं समझ पाता. अन्तःकरण में इतनी अशान्ति क्यों है, यह भी वह निर्णय नहीं कर सकता, फिर भी दिन-रात उसका हृदय दुःख-दावानल से भस्मीभूत हुआ करता है। इस प्रकार प्रेतों की दशा बड़ी ही दुःखमय होती है, जो उनके जीवनकाल की अशान्ति, अविवेक और अनाचारमय जीवन की ही प्रतिध्वनि होती है। इसे भली-भांति समझ लेने पर प्रेतों के स्वरूप को समझना आसान है। प्रेत बाधा एक चिकित्सा करने योग्य मनोविकार है, इसे भी ठीक से समझ लिया जाना चाहिए। प्रेतों का अपने सबंध में अज्ञान उनके दुःख का तो कारण है ही, हमारा अपना प्रेतो संबंधी अज्ञान भी हमारे अनावश्यक भय का कम कारण नहीं है। पढ़े लिखों द्वारा अन्धविश्वास मानी जाने वाली प्रेत विद्या विज्ञान सम्मत भी है एवं मनोवैज्ञानिकों की परिधि में आने वाली एक विद्या भी। इसे पाठक इस पुस्तक में पढ़कर अपनी भ्रान्तियों का निवारण भी कर सकते हैं तथा अपने लिए अनुसंधान का एक नया क्षेत्र भी खुला पा सकते हैं। देवसंस्कृति के अनुयाईयों के लिए तो यह और भी अनिवार्य है।

देवसंस्कृतिकी यह मान्यता है कि धन, पुत्र, वासना आदि पर आसक्ति रहते यदि किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तो उसे कई बार मृत्यु के बाद बहुत समय तक किसी भूत-प्रेत की योनि में रहना पड़ता है। इसीलिये भारतीय संस्कृति में सदैव ही अनासक्त जीवन जीने की प्रेरणा दी गई है। चार आश्रम-(१) ब्रह्मचर्य विद्याध्ययन, (२) गृहस्थ, (३) वानप्रस्थ और (४) सन्यास में अन्तिम दो अधिकांश

शिक्षायें और कर्त्तव्य ऐसे हैं जिनमें प्रत्येक व्यक्ति को धीरे-धीरे परिवार धन-सम्पत्ति का मोह हटाकर अपना मन परमार्थ साधना में लगाना पड़ता था। संन्यास दीक्षा के बाद तो वह सब कुछ त्याग कर अपने आप को उस तरह अनुभव करता था जैसे मकड़ी अपने बने बनाये जाले को स्वयं खाकर सन्तोष अनुभव करती है। तब जिसके पीछे बेटे होते थे वह उसकी आवश्यकता की सम्पत्ति उन्हें देकर शेष लोक-कल्याण में लगाकर घर छोड़ देते थे और स्वयं आत्मकल्याण की साधना में जुट जाते थे।

मृत्यु के समय, मरणशील व्यक्ति से दान कराने की व्यवस्था भी इसी कारण थी कि व्यक्ति के सब मोह मिट जायें आसक्ति के बंधन छूट जाये। अन्तिम समय व्यक्ति के भीतर वे ही संस्कार तथा वे ही आकांक्षाएं प्रबल होकर उभर आती हैं, जो जीवन भर आस्था के क्षेत्र में व्यक्तित्व का मूल बनी फैलो और घुली-मिली रहती हैं। अन्त समय में उभरी भावनाएं ही मरणोत्तर जीवन में भी सक्रिय रहती हैं।

संन्यासी से इसलिए सन्यास लेते समय उसके श्राद्ध-संस्कार भी उसी के द्वारा करा लिए जाते हैं कि उसकी कोई भी आकांक्षा-आसक्ति सूक्ष्म रूप में भी न रहे।

जो मनुष्य जितनी अधिक वासनाएं-आकांक्षाएं साथ लेकर मरता है, उसके भूत होने की सम्भावना उतनी ही अधिक रहती है। अतः इस दुर्दशा से मुक्ति का सर्वोत्तम उपाय ऐसी जीवन दृष्टि, चिन्तन पद्धति तथा आचरण-अभ्यास को विकसित करना है, जो वासनाओं-तृष्णाओं और आकांक्षाओं से निर्लिप्तता का भाव दृढ़ करे।

विक्षुब्ध आत्माओं के अप्रीतिकर घटना-क्रम

किसी को कष्ट पहुँचाने से, किसी को उत्पीड़ित करने से विद्वेष के भाव उत्पन्न होते हैं। उत्पीड़ित के मन में प्रतिशोध की भावना जन्मती है और वह अपने से ताकतवर प्रतिपक्षी को अवसर पाकर नीचे पटकने, किए गए उत्पीड़न का बदला लेने के लिए प्रयत्न करता है। जीते जी तो विद्वेष का खतरा बना ही रहता है कि जिसका उत्पीड़न किया गया है वह उलट कर वार कर दे ? किन्तु मरने के बाद भी इस प्रतिक्रिया की सम्भावना बनी रहती है। ऐसे कई उदाहरण देखे गए हैं जिनमें किन्हीं व्यक्तियों ने किन्हीं लोगों की हत्या कर दी और निश्चिन्त हो गए कि अब उनका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। परन्तु कुछ ही समय बाद देखने में आया कि जिन्हें मरा हुआ समझ लिया गया था, वे वास्तव में मरे नहीं हैं, बल्कि उनकी आत्मा उत्पीड़नकर्त्ता से बदला लेने के लिए भटक रही है और उन्होंने अपने उत्पीड़नकर्त्ता से बदला चुका ही लिया।

रूस की साम्यवादी क्रांति के समय एक जागीरदार परिवार की मृत्यु उन्हीं व्यक्तियों के प्रेतों द्वारा हुई, जिन्हें उसने तड़पा-तड़पाकर मारा था। क्रान्ति के बाद काउण्ट इवान 'सेण्टपीटर्स' वर्ग से अपनी पत्नी अन्ना और दो बच्चों के साथ घर छोड़कर भाग गया। पाँच व्यक्तियों की इस टोली में इवान का विश्वस्त और वफादार नौकर भी था। जारशाही के जमाने में इवान के अत्याचारों की कहानी सारे

करेलिया प्रदेश में फैली हुई थी। कुछ समय तो ये लोग नोवगोरोद के प्राचीन नगर में छिपे रहे और फिर नेवा नदी के तटीय वन प्रदेश में अपने रहने का स्थान तलाशते रहे।

घूमते-घूमते उन्होंने एक पुरानी झोंपड़ी में शरण ली। बूढ़ा मल्लाह आस-पास कहीं कुछ खाने-पीने का समान तलाश करने के लिए निकल गया। रात हो गयी। पति-पत्नी अपने बच्चों के साथ रात्रि विश्राम के लिए लेट गए। रोशनी के लिए उन्होंने कंदीलें जला ली थीं। तभी हवा का एक झोंका आया और कंदील बुझ गयीं। दुबारा कंदील जलाई तो उन्होंने देखा कि आठ-दस लोमड़ियाँ उन्हें घेरे खड़ी हैं। घेरा बना कर उन्होंने इवान और अन्ना के चारों ओर कई चक्कर लगाये तथा अचानक लुप्त हो गयीं। इससे दोनों घबड़ा गए। वातावरण इतना भयावह था कि दोनों की घिग्घी बँध गयी।

जब बूढ़ा मल्लाह झोंपड़ी में वापस आया तो उसने अपने मालिक और मालकिन को अचेत पाया। वातावरण में घुली हुई भयानकता उसे व्याप रही थी। मल्लाह ने कन्दील जलाकर देखा तो रेनडियर की खाल ओढ़े एक विकराल साया कमरे में डोलता हुआ दिखाई दिया। बूढ़ा मल्लाह भयभीत होकर प्रार्थना करने लगा। वह समझ गया कि झोंपड़ी में भूतों का डेरा है। तभी उस साये ने गरजदार आवाज में कहा, 'प्रिय मल्लाह ! तुम्हें डरने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन इवान और अन्ना के पापों का घड़ा भर गया है। इनने हजारों निरपराध निरीह व्यक्तियों को जान से मारा है, बच्चों और औरतों को सताया है और उसकी पत्नी, यह अन्ना···· यह तो जिन्दा चुड़ैल है। इसने अपने कई प्रेमियों, यहाँ तक कि अपने बाप और भाई को भी इवान के सिपाहियों से मरवाया है, कारण कुछ नहीं, केवल इसलिए कि यह अपने कुकृत्यों पर परदा डाले रही और स्वयं बेखटके ऐश करती रहा।''

अन्ना जागीरदार इवान की चौथी पत्नी थी। वह करेलिया में स्थित किजी के एक गिरिजाघर में पली थी। काउण्ट इवान एक बार उस चर्च में प्रार्थना के लिए गया था। वहाँ से लौटते समय उसकी दृष्टि अन्ना पर पड़ गयी और अपने प्रभाव तथा पैसे के बल पर उसे अपने महल में ले आया था। इवान के महल में विलासी जीवन जीते हुए उसे बुरी आदतें पड़ गयी थीं। कई नवयुवकों को उसने अपने प्रेम पाश में फँसाया और अपनी भोग तृष्णा पूरी करने के बाद उनकी हत्या करा दी।

बूढ़े नौकर ने मालिक और अन्ना के होश में आने की प्रतीक्षा की। रात के तीसरे पहर में उसकी आँखों के सामने एक लाल प्रकाश का गोला जगमगाने लगा। उस लाल गोले के चकाचौंध कर देने वाले प्रकाश में उसने देखा कि रेनडियर की कई कच्ची खालें जमीन पर बिखरी हुई हिल रही थीं। कभी उनमें से घोड़ों की हिनहिनाहट सुनाई देती तो कभी भालुओं की गुर्राहट और फिर कभी लोमड़ियों की दर्दनाक चीखें। तभी झोंपड़ी के एक ओर की दीवार हहराकर गिर पड़ी। इसमे जो शोर हुआ उसने इवान और अन्ना दोनों को जगा दिया, दोनों घबड़ा कर उठ बैठे। उन्होंने देखा कि उनके आस-पास रेनडियर की खालें बिखरी पड़ी हैं। जैसे ही उनकी दृष्टि इन खालों पर पड़ी, वैसे ही उनमें खिलखिलाने की आवाज आई इवान और अन्ना घबड़ाकर एक-दूसरे से चिपक गए। तभी गिरी हुई दीवार के पत्थरों पर से सूमरधारी मछलियों की सी आकृतियां कूदीं।

अब इन लोगों के पास भागने के अलावा और उपाय नहीं था। सबने जल्दी-जल्दी सामान बटोरा और नेवा नदी के किनारे पहुँचे। वहाँ उन्होंने तट पर बँधी नौकायें खोलीं और उनमें सवार हो गये। वे नदी पार कर ही रहे थे कि अचानक न जाने कहाँ से लाल रंग की लोमड़ियां प्रकट हुईं और वह अन्ना के ऊपर झपटीं तथा वह डर के

मारे नदी में कूद गयीं जहाँ सूमरधारी मछलियों ने देखते ही देखते उसे अपना ग्रास बना लिया।

अपनी प्रिय पत्नी का यह करुण अन्त देखकर इवान विक्षिप्त सा हो उठा। नाव कुछ ही आगे बढ़ी होगी कि उसके साथ भी वही घटना घटी। अलबत्ता इन खालधारी प्रेतात्माओं ने बूढ़े मल्लाह का कुछ नहीं बिगाड़ा। उनके बच्चों को भी कोई परेशानी नहीं हुई। उन्हें बूढ़े मल्लाह ने ही पाल-पोस कर बड़ा किया तथा पढ़ाया लिखाया।

हत्या का सुराग--

ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं, जिनमें मृतात्माओंने, जिनकी मृत्यु स्वाभाविक समझ गई थी या जिनकी हत्या का सुराग नहीं मिल सका था। अपने कातिलों को पकड़वाया। साउथ वेल्स में एक धनी किसान जेम्स फिशर ने अपने मित्र के बेटे जार्ज वारेल को अपना उत्तराधिकारी बनाया। जार्ज वारेल ऐयाश और विलासी प्रकृति का आदमी था। जल्दी ही सम्पत्ति हथिया लेने की इच्छा से उसने फिशर को अधिक शराब पिलाकर उसकी हत्या कर डाली। हत्या इतनी सफाई से की गयी थी कि उसके पीछे हत्या का कोई सूत्र नहीं छूटा था। यहाँ तक कि उसकी लाश का भी पता नहीं चला था।

जून १८२३ की घटना है। जेम्स फर्ले नामक एक किसान जो फिशर के पास ही रहता था, एक दिन उनके मकान के सामने से गुजर रहा था। उसने फिशर का भूत देखा जो उसी के मकान के एक कमरे की ओर इंगित कर रहा था। उस समय तो पारले डर कर भाग गया किन्तु यह आकृति बार-बार दिखाई दी। दूसरे दिन जब वह दुबारा उधर से गुजर रहा था तो पुनः वही आकृति दिखाई दी। उस दिन भी वह डर कर भाग गया। तीसरे दिन, चौथे दिन, पाँचवे दिन कई दिनों तक यह क्रम जारी रहा। वह आकृति ऐसी कोई हरकत नहीं करती थी जिससे उससे डराने का कोई इरादा व्यक्त होता

हो। यह केवल एक कोठे की ओर इंगित करती थी। एक दिन अब पारले अपने मित्रों के साथ इस घटना की चर्चा कर रहा था तो उन्होंने इसकी सूचना पुलिस को देने की सलाह दी। पुलिस को सूचना दी गई और उस कोठे की खुदाई करायी गई, जिधर वह प्रेतात्मा इंगित करती थी। खुदाई में फिशर की वैसी ही विकृत लाश मिली जैसी कि पारले को उसकी आकृति दिखाई देती थी। यहीं नहीं ऐसे सूत्र भी मिलें जिनके आधार पर हत्या के सुराग मिलते थे और उन सूत्रों के अनुसार जार्ज बारेल हत्या का दोषी सिद्ध हुआ। बारेल ने अपना अपराध स्वीकार किया और उसे इस हत्या के अपराध में फाँसी की सजा भी मिली।

पाप न समाज से छिपता है न अपने आप से—

अनीति अनाचार के शिकार होकर अपने प्राण खो बैठने वाले व्यक्ति की आत्मा भी कई बार अपराधी को पकड़वा देती है। एडिन-बरा में १९ ० में एक अद्भुत हत्याकाण्ड हुआ वहाँ की एक मकान मालकिन मिस जूरी की हत्या उसी मकान में रह रहे किरायेदार चार्ली ने कर दी। चार्ली एक पुलिस अधिकारी था और उसी थाने का इँचार्ज था जिसमें कि जूरी की हत्या की रिपोर्ट दर्ज करायी गयी थी। अतः चार्ली ने इस रिपोर्ट पर कोई कार्यवाही नहीं की और केस फाइल हो गया। यह सारा घटनाक्रम मार्च १९०५ का है।

इसके बाद उस मकान में जो भी किरायेदार आता जूरी की आत्मा उस केस को पुनः चालू करने तथा अपराधी को दण्ड दिलवाने के लिए कहती। लेकिन लोग जूरी की आकांक्षा को पूरा करने के स्थान पर डर के मारे वह मकान छोड़ कर चले जाते, सन् १९२० में उसी बंगले में मि० डिक्सन नामक एक पुलिस अधिकारी आया जूरी की आत्मा ने उससे भी वही कुछ कहा जो अन्य किरायेदारों से कहती रहती थी। मि० डिक्सन ने उन बातों को सहजता और गम्भीरता से

लिया। उन्होंने एडिनबरा के उस थाने में दबा दी गयी १५ वर्ष पुराना वह फाइल फिर निकलवायी। उसमें जूरी के नौकर द्वारा यह शिकायत दर्ज करायी गई थी कि किसी ने उसकी मालकिन को गला घोंटकर मार डाला है। इस रिपोर्ट पर तत्कालीन थाना अध्यक्ष ने टिप्पणी लिखवायी था कि—जिस समय जूरी की हत्या हुई उस समय चार्ली गश्त पर गया हुआ था और अनुमान किया जाता है कि मिस जूरी ने अकेलेपन से ऊबकर आत्महत्या कर ली है।

जूरी की आत्महत्या द्वारा दिए गए निर्देशों के आधार पर मि० डिक्सन ने सारे मामले की फिर से जाँच करायी और सारे प्रमाण एकत्रित किए गए। सभी प्रमाण चार्ली के विरुद्ध जाते थे। इस आधार पर चार्ली को गिरफ्तार किया गया। गिरफ्तार करने के बाद चार्ली ने स्वीकार कर लिया कि उसी ने जूरी की हत्या की थी क्योंकि जूरी से उसके अवैध सम्बन्ध थे। प्रेम का ढोंग रचकर चार्ली जूरी से जल्द ही विवाह करने का वादा करते हुए यह सब करता रहा था। इन सम्बन्धों के कारण जूरी गर्भवती हो गयी थी और शादी के लिए दबाव डालने लगी था। उससे छुटकारा पाने के लिए ही चार्ली ने जूरी की हत्या कर दी और अपने पुलिस अधिकारी होने का लाभ भी उठाया।

व्यक्ति के अपने अपकर्म ही भूत बन कर उसका पीछा करते रहते हैं और जब तक वह व्यक्ति उन दुष्कर्मों का फल भोग नहीं लेता तब तक उनसे पीछा नहीं छूटता। २४ जनवरी ७८ की घटना है मलगवाँ बिहार के सोनपुर गाँव में एक बनिए के यहाँ नौकरी कर रहे २६ वर्षीय युवक भवानी ने १६ वर्षीया दुलारी के साथ मौका देखकर अपनी वासना पाशविक ढंग से पूरी की और इसके बाद दुलारी की हत्या करके नहर में फेंक दी। इस घटना का किसी को पता नहीं

चला और न पुलिस को ही हत्या का कोई सुराग ही मिल सका कि किसने हत्या की थी ?

लेकिन भवानी के कानों में उस निर्दोष युवती की चीत्कार हमेशा गूँजती रहती, मूक याचना भरी निगाहें, चेहरे पर विवशता के भाव, आतंक की काली छाया आदि—कुल मिलाकर वह सारा दृश्य भवानी की आँखों के आगे कौंध जाता। अन्तरात्मा की प्रताड़ना और पश्चाताप की व्यथा वेदना भवानी अधिक न झेल सका और मार्च ७६ तक मझगावां वासियों ने भवानी को सड़कों पर पागलों की तरह चिल्लाते-चीखते देखा। यही नहीं कुछ दिनों बाद भवानी ने विक्षिप्तावस्था में अपने गले में फाँसी लगा ली।

इस जन्म में कोई व्यक्ति पाप कर्मों के दण्ड से बच जाने में सफल भी हो जाता है तो भी उसका दण्ड अगले जन्म में सुनिश्चित रूप से मिलता है। आप्तवाक्य है कि—पूर्व जन्म के पाप ही इस जन्म में असाध्य और कष्टकर रोगों के रूप में पीड़ित करते हैं।" अगले जन्म में यह दण्ड तो भोगना ही पड़ते हैं इसी जन्म में जो मानसिक बोझ, व्यथा पश्चात्ताप की आग दहकती है वही कम नहीं होती।

इटली के तानाशाह मुसोलिनी के सम्बन्ध में विख्यात है कि वह मरने के बाद प्रेत बनकर अपने खजाने की रखवाली करता रहा है। युद्ध में हारने के बाद वह अपनी जान बचाकर स्विट्जरलैण्ड की तरफ भागा था। अरबों रुपये की सम्पत्ति, सोने की छड़ें, हीरे, जवाहरात, पौण्ड, पेंस और डालरों के रूप में उसके पास जमा थी। लेकिन वह भागने में सफल नहीं हुआ और कम्युनिस्ट सेनाओं द्वारा गोली से उड़ा दिया गया।

इसके बाद उसने प्रेत, पिशाच का रूप धारण कर लिया और खजाने की रखवाली करने लगा। अशरीरी होने के कारण खुद तो वह खजाने का लाभ उठा नहीं सकता था लेकिन वह दूसरों को भी उसका

लाभ नहीं उठाने देना चाहता था। कहा जाता है कि उसी ने प्रेत, पिशाच बनकर खुद अपना खजाना छुपाया और उसकी रखवाली करने लगा। जिनने भी उसका पता लगाने की कोशिश की मुसोलिनी के प्रेत ने उनके प्राण लेकर ही छोड़े। उस खजाने को ढूँढ़वाने और प्राप्त करने के लिए सरकार ने कितनी ही समितियाँ गठित कीं परन्तु सभी खोजी दल काल कवलित हो गए।

मरने के बाद उस प्रेत पिशाच पर क्या बीतती होगी यह तो कहा नहीं जा सकता परन्तु व्यक्ति के अपने नृशंस क्रूर कर्म उसे तड़पा-तड़पा कर मारते हैं। ट्रांसलवानिया के शासक काउण्ट ड्राक्युला ने अपने जीवनकाल में जिस प्रकार लोगों की नृशंस हत्या की उससे भी भयकर तरीके से उसे मारा गया। तुर्की सेनाओं ने जब ट्रांसलवानिया को जीतकर ड्राक्युला को बन्दी बना लिया तो उसके शरीर से रोज मांस का एक टुकड़ा काट लिया जाता और वही उसे कच्चा चबाने को मजबूर किया जाता।

प्रेतात्मा द्वारा अनीति का प्रतिशोध—

जापान की जनश्रुतियों में सत्रहवीं सदी के महा प्रेत सोगोरो की कथा एक ऐतिहासिक तथ्य की तरह सम्मिलित हो गयी है और अनाचार बरतने वालों को अक्सर यह घटना-क्रम इसलिए सुनाया जाता रहा है कि अनीति से बाज आयें।

जापान उन दिनों सामन्ती जागीरों में बँटा हुआ था। राजधानी तोयदो नगरी थी पर जागीरदार अपने-अपने छोटे ठिकानों से राज-काज चलाते थे। ऐसा ही एक ठिकाना था शिमोसा प्रान्त का साकूरागढ़। इसका एक सामन्त था—कोत्सुके। उसने प्रजा पर अत्यधिक कर लगाए और किसानों पर इतने जुल्म ढाये कि वे त्राहि-त्राहि कर उठे। अन्ततः १३६ गाँवों के किसानों ने मिलकर अपना दुखड़ा जागीरदार के कानों तक पहुँचाने का निश्चय किया। वे सोचते थे

शायद छोटे कर्मचारी उन्हें सताते हैं। सामन्त को बात मालूम पड़ेगी तो वह उनकी पुकार सुनेगा। इस विचार से वे उनके प्रतिनिधि साकुरा चल पड़े। उनका जत्थेदार था ४८ वर्षीय सोगोरो। उन लोगों ने एक लम्बी अर्जी लिखी और प्रयत्न किया कि उसे जागीरदार को दें। अधिकारियों ने उन्हें भेंट करने की इजाजत नहीं दी और अर्जी को पढ़कर वापिस लौटा दिया। इतने पर भी उनने हिम्मत नहीं छोड़ी और जब सामन्त अपने गढ़ में प्रवेश कर रहा था तो उसकी बग्घी रोककर अर्जी हाथ में थमा ही दी। वहाँ भी उसे रद्द कर दिया गया। अन्य किसानों को तो वापिस लौटा दिया गया पर सोगोरो एक सराय में ठहरा ही रहा और उसने जापान सम्राट तक किसानों की दुःख गाथा पहुँचाने का निश्चय किया। संयोगवश सम्राट अपने पूर्वजों की समाधि पर पूजा करने के लिए वहाँ आने वाले थे। कृषक मुखिया ने यह अच्छा अवसर समझा और उस अर्जी की नकल सम्राट का भी रास्ता रोककर उनके हाथ में थमा दी।

परिणाम तो कुछ नहीं निकला पर सामन्त ने सोकोरो को गिरफ्तार करा लिया। उस पर शासकों के विरुद्ध धृष्टता बरतने और षडयन्त्र करने का मुकदमा चलाया गया। दण्ड में न केवल उसे वरन् उसके सारे परिवार को कत्ल कर देने का आदेश सुनाया गया। जन-समूह की उपस्थिति में ४८ वर्षीय सोगोरो उसकी ३७ वर्षीय पत्नी मिन, १३ वर्षीय पुत्र जेन्नोसूके, १० वर्षीय पुत्र सोहेय, ७ वर्षीय पुत्र किहाची का सिर धड़ से उड़ा दिया गया। दर्शक कलेजा थाम कर इस कुकृत्य को देखते रह गये।

लाशें दफना दी गयीं पर वातावरण में न जाने कैसा भयङ्कर उभार आया कि सर्वत्र एक आग और घुटन अनुभव की जाने लगी। शासकों को विचित्र भयानकता ने घेर लिया। तीसरे ही दिन सुधार घोषणायें हुईं। किसानों पर अत्याचार की जाँच आरम्भ हुई और

साकूरागढ़ के समस्त सलाहकार, चार जिलों के शासनाध्यक्ष, बाईस अफसर, ७ न्यायाधीश, तीन लेखा परीक्षक बर्खास्त कर दिए गए। और किसानों पर से समस्त बढ़े हुए कर तथा लगे हुए प्रतिबन्ध उठा लिए गए।

ऐसा विचित्र परिवर्तन कैसे हुआ ? सामन्त यकायक कैसे बदल गया ? यह सब आश्चर्य का विषय था पर जानने वाले कहते थे कि सोगोरो का प्रेत इस बुरी तरह राज्य परिवार के पीछे पड़ा है कि अब उन्हें किसी प्रकार अपनी खैर दिखाई नहीं पड़ती। सामन्त कोत्सुके नोसूके और उनकी पत्नी सोते-जागते भयंकर प्रेत छाया को अपने चारों ओर अट्टहास करते हुए देखते और अनुभव करते उन्हें अब तो मृत्यु का ग्रास बनना ही पड़ेगा। नंगी तलवार का पहरा बिठाया गया, ओझा-तान्त्रिक बुलाये गए पर किसी से कुछ रोकथाम न हुई। सामन्त की पत्नी बीमार पड़ी और चारपाई पर से उनकी लाश ही उठी। वह स्वयं विक्षिप्त सा रहने लगा। एक अवसर पर राजधानी याहोमी में सभी सामन्त सम्राट् को वार्षिक भेंट देने के लिए उपस्थित हुए थे। इनमें से साकेयी के साथ कोत्सुके की झड़प हो गयी उसने आव देखा न ताव झट तलवार चला दी और उसकी हत्या कर दी। इसके बाद वह जान बचाकर भागा और अपनी गद्दी में आ छिपा। सम्राट् ने पाँच हजार सैनिक भेजकर उसकी गद्दी पर कब्जा कर लिया और कबूतर पकड़ने जैसे जाल में बँधवा कर राजधानी बुलाया। जहाँ उसका सिर उसी तरह उड़ाया गया जैसा कि सगोरो का उड़ाया गया था।

अनीति पूर्वक सताने वालों को इस घटनाक्रम को सुनाकर यह शिक्षा दी जाती है कि दुर्बल को सताने वाला यह न समझे कि वह सर्व समर्थ है। अन्याय के प्रति विद्रोह की आग इतनी प्रचण्ड होती है कि प्रेत बनकर भी प्रतिशोध ले सकती है और अत्याचारी को उसके

कुकृत्य का मजा चखा सकती है। दुर्बलों का विक्षोभ कभी भी प्रबल प्रचण्ड बनकर आततायी पर टूट पड़ सकता है।

ऐसी ही एक और घटना है। अफ्रीका के नाइजीरिया देश में एक समय अँग्रेजों का उपनिवेश था। अब यों वहाँ आजादी है, पर प्रभुत्व स्थायी रूप से बसे हुए गोरों का ही है। उस क्षेत्र के एक अँग्रेज अफसर फ्रैंक हाइब्स ने नाइजीरिया में आँखों देखा प्रेत विवरण प्रकाशित कराया था। वह अफसर किसी काम से "इसुइंग" गया। वहाँ एक पुराना टूटा-फूटा डाक बँगला था। उसने उसी में ठहरने का निश्चय किया। उस क्षेत्र के रहने वाले इसुओरगु कबीले के आदिवासी उसे समझाते रहे कि इस डाक बँगले में प्रेत रहते हैं, इसलिए वह वहाँ न रहे। उन्हीं के घरों में ठहर जाँय।

अफसर उनकी अन्धमान्यताओं पर हँसता रहा और कहता रहा—"उनके गन्दे घरों की अपेक्षा प्रेत के साथ खुले डाक बँगले में रहना अच्छा है।" मजदूरों ने उस खण्डहर की सफाई कर दी, खाने, ठहरने के साधन जुटा दिए, पर रात को वहाँ रहने के लिए कोई तैयार न हुआ। निदान उसे अकेले ही उसमें रहकर रात बितानी पड़ी।

रात को बारह बजे तक वह सोता रहा किन्तु अर्धरात्रि होते ही किसी ने उसकी मच्छरदानी खींची। उठकर देखा तो कोई नजर नहीं आया किन्तु बदबू इतनी तेज फैल रही थी कि वहाँ ठहरना मुश्किल हो गया। इतने में एक हवा के झोंके ने बंगले की खिड़कियाँ जोरों से खड़खड़ाना शुरू कर दीं, मेज पर रखी चाय की प्लेट जमीन पर पटक दी। साथ ही किन्हीं भारी पैरों की आवाज उसे इस तरह सुनाई पड़ने लगी मानो कोई बड़ी आकृति का प्राणी इधर टहल रहा हो, भरी पिस्तोल हाथ में लेकर हाइब्स बाहर निकला तो देखा कि अँधेरे में कोई छाया जैसी आकृति बरामदे में टहल रही है।

अफसर ने आवाज दी, पर कोई उत्तर न मिला तो उसने दो गोलियाँ दागदीं। पर इसका कोई प्रभाव उस आकृति पर न पड़ा। आकृति समीप बढ़ती आई और उसकी शक्ल आसानी से दीख पड़ने लगी। भयङ्कर चेहरा, नाक बैठी हुई, होंठ खुले हुए, गंजा सिर, स्थिर पुतली, गड्ढों और झुर्रियों से भरे गाल—वह बड़ा भयानक लग रहा था। अफसर मूर्तिवत् सुन्न खड़ा रहा। वह सोच न सका कि यह कौन है और क्या कर रहा है। धीरे-धीरे आकृति पीछे हटी और खम्भे पर चढ़ने लगी। अफसर ने उसे निशाना बनाकर दो गोलियाँ और चलाईं, पर वह लगी किसी को नहीं। छाया भी गायब हो गई। डरा हुआ हाइक्स बेतहाशा भागा और कुछ दूर एक चीख के साथ बेहोश हो गया। आदिवासी यह जानने के लिए इर्द-गिर्द ही घूम रहे थे कि देखें क्या घटना घटित होती है। वे लोग चीख सुनकर दौड़े आये और अफसर को उठाकर अपनी चौपाल पर ले गये। जहाँ उसे कई घण्टे बाद होश आया।

दूसरे दिन अफसर ने आदिवासियों को बुलाकर उनके परिचित प्रेत की बाबत पूछताछ की तो इसुओरगु लोगों ने बताया कि जिस जगह डाक बङ्गला बना है पहले उस जगह एक टीला था जिस पर जूजू देवता की पूजा होती थी और जानवरों तथा मनुष्यों की बलि दी जाती थी। अंग्रेज जब आये तो उन्होंने उस स्थान की अनगढ़ मूर्तियों को उठवाकर एक ओर फिकवा दिया—नरबलि बन्द करा दी और डाक बङ्गला बनवा दिया। इस पर उस क्षेत्र का देव पुरोहित बहुत बिगड़ा और अंग्रेजों के चले जाने पर गाँव वालों को इकट्ठा करके बोला—डाक बङ्गले को जला दो और वहाँ फिर से देवता की पूजा आरम्भ करो। भयभीत ग्रामवासी इसके लिए तैयार नहीं हुए। निराश पुरोहित क्रोध में उन्मत्त स्थिति में पागलों की तरह बड़बड़ाता और मन्त्र पढ़ता हुआ उस डाक बङ्गले के चारों ओर

चक्कर लगाता रहा और अन्त में एक रस्सी से उसी के बरामदे में फांसी लगाकर मर गया, तब से अब तक उसी पुरोहित का प्रेत डाक बङ्गले में रहता है। कोई उधर जाने की हिम्मत नहीं करता। इससे पहले भी कोई अंग्रेज अफसर आया है और उसमें ठहरा है तो उसे भी प्रेत ने रहने नहीं दिया है।

उस बङ्गले में ठहरने वाले यह अनुभव करते रहे हैं कि विचित्र प्रकार की दुर्गन्ध उस बङ्गले के कमरों से आती है। उस भीषण उष्ण क्षेत्र में जहाँ रात को भी लोग हांफते रहते हैं। इस बङ्गले में कंपाने वाली ठण्डक रहती है। बाहर हवा बिलकुल ही बन्द क्यों न हो किन्तु भीतर आंधी तूफान उठते रहते हैं।

फ्रैंक हाइक्स ने इन सब बातों की जानकारी विस्तार पूर्वक प्राप्त की और जब उसे डाक बङ्गले के होने का विश्वास हो गया तो भविष्य में किसी अफसर पर सङ्कट न आये यह ध्यान में रखते हुए उसमें अपने सामने आग लगवा दी और वह जलकर धराशाही हो गया। कितने आश्चर्य की बात है कि इस अग्निकाण्ड के साथ भविष्य-वाणी भी सिद्ध हुई। पुरोहित जब आदिवासियों को डाक बङ्गला जलाने के लिए तैयार न कर सका तो उसने इतना ही कहा—"अच्छा तुम मत जलाओ—पर देखना एक दिन वह किसी न किसी के द्वारा जलकर ही नष्ट होगा।" सचमुच उस डाक बङ्गले का अन्त वैसा ही हुआ। विक्षोभ जब अन्तःकरण में आंधी की तरह बहता है, तो वह मृत्यु के बाद भी सक्रिय रहता है।

इसीलिए विक्षोभ, उद्वेग की मनःस्थिति से बचकर रहने का शिक्षण-परामर्श विवेकशील मनीषी सदैव देते रहे हैं। धार्मिक शिक्षण का प्रयोजन ही व्यक्ति को सुख शान्ति की जननी सुविकसित मनोभूमि का निर्माण स्वयं करने की प्रेरणा देना है। आक्रोश-आवेश की अधि-कता सामाजिक और पारिवारिक जीवन को ही नहीं अस्त-व्यस्त

कर देती, अपितु व्यक्ति-चेतना में संस्कार रूप में घुपकर उसका पारलौकिक जीवन तक कष्टकारक बना डालती है। घृणा और रोष की स्थिति में मरने वाले अक्सर प्रतिपक्षी को कष्ट देते हैं ऊपर की घटना में पुरोहित टीला हटाने के कारण रुष्ट हुआ और उस आक्रोश में आत्महत्या कर बैठा। मरने के बाद भी वह शांत नहीं हुआ और उद्विग्न आत्मा उस टीले की जगह बने डाक बङ्गले को अपनी प्रतिहिंसा का केन्द्र बनाये रही। ऐसे ही विक्षुब्ध प्रेतों का वर्णन लन्दन के प्रसिद्ध टावर के सन्दर्भ में आता है।

सन् १८६४ की ठण्ड की रात्रि की एक घटना है। राजा की शाही रायफल कोर्प्स का एक सन्तरी विलियम पहरा दे रहा था। उसने टावर के बन्द दरवाजे के धुंधलके के मध्य एक सफेद आकृति को अपनी ओर आते देखा। उसने चेतावनी दी—"हाल्ट"। दो बार दोहराने पर भी वह रुकी नहीं और उसकी रायफल का बेयोनेट उस छाया के मध्य से निकल गया। यहीं विलियम बेहोश हो गया। जहाँ पर गिरा यह वही स्थान था, जहाँ रानी 'एने बोलेन' को हेनरी-७ के समय में फाँसी दी गई थी कुछ दिनों बाद उस पहरेदार की मृत्यु हो गई।

हेनरी—८ भी उसी महल में रहे थे एवं यहीं पास में उन्हें दफनाया गया था। उनकी भयङ्कर आकृति अक्सर टावर में वहाँ के अधिकारियों ने घूमती देखी। इस समय ३० लाख पर्यटक हर वर्ष इस ऐतिहासिक टावर को देखने आते हैं। सन् १०७८ ईसवी से कई राजाओं व उनके परिवार का इतिहास इसी टावर से जुड़ा है। राज-गद्दी के झगड़ों में इनमें से कई की हत्यायें हुईं, कुछ ने आत्महत्या की। इन सभी के प्रेत यदाकदा किसी न किसी ने वहाँ देखे ही हैं। इन प्रेतों की शांति हेतु एक पादरी ने सन् १८५७ में एक ईसाई कर्मकांड

भी किया, जिसके बाद घटनाओं में कुछ कमी आई पर छुट-पुट सिल-सिला अभी भी जारी है।

मृतात्मा का विक्षोभ औरों के लिए कष्टकर—

अब से कोई २० वर्ष पूर्व इङ्गलैंड में एक ऐसी घटना प्रकाश में आई जिसने एक प्रकार से तहलका ही मचा दिया। पोर्टस् साउथ रोड इशर कस्बे के पास से गुजरती है इस घने जङ्गलों से घिरे हुए क्षेत्र में लगातार ऐसी घटनायें होने लगीं कि कोई मोटर उधर गुजरती तो बन्दूक की गोली की तरह सनसनाती हुई चीज आती और मोटर के शीशे, छत्त या दरवाजे से टकराकर उसमें छेद कर देती। छेद एक इन्च का इतना साफ, सीधा, गोल और व्यवस्थित होता मानो किसी बहुत होशियार मिस्त्री ने सधी परखी हुई मशीन से किया है अन्यथा कांच भी किसी चीज की टक्कर से टूट सकता है, उसके टुकड़े बिखर सकते हैं पर चिकने किनारे वाला सही छेद होना तो सचमुच एक बड़े अचम्भे की बात है।

घटनायें लगातार होने लगीं। उधर से गुजरने वाली मोटरों को दुर्घटना का अक्सर सामना करना पड़ता। मोटर रुकती, आस-पास का क्षेत्र खोजा-छाना जाता, पर आक्रमण कहां से होता है, कौन करता है इसका कुछ भी पता न चलता।

पुलिस ने भारी माथा-पच्ची की पर कुछ पता न चला। गुप्त-चर विभाग के स्काटलैंड यार्ड ने आहत मोटर ड्राइवरों को वैज्ञानिक जाँच के लिए प्रस्तुत किया पर वहाँ भी सुराग न मिला। इशर कस्बे की नगरपालिका ने तो पुलिस के खिलाफ एक प्रस्ताव ही पास कर डाला कि वह इस क्षेत्र को आतङ्कित करने वाली इन वारदातों को न रोक पाती है न खोज करती है। पुलिस वाले लाचार थे, कुछ समझ ही काम नहीं करती थी कि किस आधार पर खोज आगे बढ़ाई जाय। कितने ही पत्रकार वस्तु स्थिति पर प्रकाश डालने के लिए

उधर पहुँचे। मोटरों पर अदृश्य आक्रमण होने, केवल शीशे, टूटने, गोल और सही छेद होने, कोई जन हानि न होने मोटर के इंजनों को कोई आघात न लगने की बात एक साथ मन पर बिठाने से ऐसा चित्र बन जाता था जिसका हल सूझ ही न पड़े। सुरक्षा के सारे प्रयत्न बेकार हो गये। घटनायें रुक नहीं रही थी। कौतूहल और आतंक बढ़ने से उस क्षेत्र का आवागमन रुकने भी लगा था और हर तरह परेशानी अनुभव की जा रही थी।

कोई कहते थे कि इस घने जङ्गल में कोई मृत्यु किरण जैसा परीक्षण हो रहा है और वे किरणें छिटक कर ऐसा छेद करती हैं। इन किम्वदन्तियों का विज्ञान विभाग ने स्पष्ट खण्डन किया। फिर कारण क्या हो सकता है यह रहस्य तीस वर्ष बाद अभी भी जहाँ का तहाँ बना हुआ है। कुछ समय बाद दुर्घटनायें बन्द हो गईं पर गुप्तचर विभाग के खोज कार्यों में वह तथ्य अभी भी जहाँ का तहाँ मौजूद है।

परोक्ष जीवन और अदृश्य जगत पर विश्वास करने वाले इस घटना क्रम का सम्बन्ध दो भूतकालीन तथ्यों के साथ जोड़ते हैं इनमें से एक तथ्य यह है कि यह बेनेयर माउण्ट स्टेट पहले एक जागीरदार ड्यूक आफ न्यू कान्सिल के पास थी। उसने इस क्षेत्र में एक सुन्दर झील बनवाई। विलियम बेन्ट नामक ठेकेदार ने इसे बहुत दिलचस्पी और खूबसूरती के साथ बनवाया। तैयार हो गयी तो ड्यूक ने उसका पैसा दबा लिया और अपने नौकरों से उसे उसी झील में फिकवा दिया। बेचारा किसी प्रकार निकल तो आया पर दो दिन बाद उसकी मृत्यु हो गई। सुना जाता है कि उसकी क्षुब्ध आत्मा को मोटर स्वामी ड्यूक के प्रति द्वेष अभी भी विद्यमान होगा और वह ड्यूक के साथ-साथ मोटरों से घृणा करने लगी होगी और अब ड्यूक के न रहने पर उन्हीं से बदला लेती होगी।

क्लाइव की आत्मा सम्भव है अपना मोटर द्वेष अभी भी धारण किये हुए हो और सम्भव है इसी क्षेत्र में उनका आवागमन उसे सहन न होता हो और आक्रमण का ऐसा अनोखा शस्त्र उसी के द्वारा प्रयुक्त किया जाता हो।

मरने के बाद मनुष्य की काया ही नष्ट होती है। अन्तःकरण चतुष्टय मरने के बाद भी यथावत् बना रहता है। यदि मन आत्म-ग्लानि, आक्रोश आदि भावों से भरा रहे तो उससे न केवल इस जीवन में भी वह मनःस्थिति बहुत अंशों में ज्यों की त्यों बनी रहती है और विश्राम के लिये मिले हुए उस अवकाश में भी प्राणी को चैन नहीं लेने देती।

इस तथ्य पर उपरोक्त घटनाओं से प्रकाश पड़ता है। इस प्रकार का यही एक प्रमाण नहीं वरन् समय समय पर ऐसी ही अनेक घटनायें घटित होती रहती हैं पर इन्हें महत्व नहीं मिलता। उपहास और अविश्वास के गर्त में वे घटनायें भी उपेक्षित हो जाती हैं जो वस्तुतः बहुत प्रामाणिक थीं, यदि उनका गहराई से विश्लेषण होता तो उस प्रत्यक्ष के आधार पर परोक्ष पर बहुत कुछ प्रकाश पड़ सकता था।

उपरोक्त इटार कस्बे के समीप वाले जङ्गल की घटना को इसलिए महत्व मिला कि पुलिस पत्रकार आदि लोगों ने उसमें दिलचस्पी ली। यदि वे लोग उस खोज बीन में भाग न लेते तो मोटर वालों की ही सनक या शरारत कहकर उसे उपेक्षित कर दिया गया होता। यह ठीक है कि कितनी ही मनगढ़न्त ऊल जलूल बातें भी होती रहती हैं पर उनमें से कुछ ऐसी भी होती हैं जिनकी खोज-बीन करने से उन तथ्यों पर प्रकाश पड़ सकता है जो अभी तक एक प्रकार से अपूर्ण, शंकित और अविश्वस्त ही बने हुए हैं।

इस घटना में ठेकेदार की आत्मा का प्रकोप सिद्ध नहीं होता। क्योंकि एक व्यक्ति के दुर्व्यवहार का क्षोभ प्रायः एक तक ही सीमित रहता है। दूसरी बात यह है कि अन्याय पीड़ित व्यक्ति की अन्तरात्मा कलुषित नहीं होती इसलिए वह उग्र स्तर के ऐसे विग्रह नहीं करती जो अन्य निर्दोष लोगों को कष्ट पहुँचाए।

जिसका जीवन स्वयं में कलुषित रहा हो, जिसने अनेकों को कष्ट पहुँचाने में रस लिया हो, स्वार्थ सिद्धि के लिए कितनों के साथ ही अनाचार विश्वासघात किया हो। ऐसे ही लोगों की आत्मायें इतनी हिंस्र हो सकती हैं जो अनायास लोगों को कष्ट पहुँचा कर अपनी पूर्व आकांक्षाओं की तृप्ति करें। इस दृष्टि से क्लाइव की आत्मा के द्वारा यह उपद्रव होता हो तो आश्चर्य की बात नहीं है।

घटना इस तथ्य पर प्रकाश डालती है कि एक शरीर छोड़ने और दूसरा प्राप्त करने के मध्यान्तर में आत्मा को सूक्ष्म शरीर धारण करके अन्तरिक्ष में विचरण करना पड़ता है। यह इसलिए भी होता होगा कि शरीर रहते किये दुष्कृत्यों के परिणामों को वह अधिक विस्तार-पूर्वक देख समझ सके और भविष्य के लिए उस अवांछनीय नीति की अनुपयुक्तता को स्वीकार सके।

दूसरा तथ्य यह प्रकट होता है कि सूक्ष्म शरीर बिलकुल असमर्थ नहीं हो जाता उसमें न केवल भावनात्मक क्षमता रहती है वरन् भौतिक वस्तुओं को प्रभावित करने जैसी सामर्थ्य भी रहती है। यदि ऐसा न होता तो मोटर के शीशों में ठीक गोल छेद करना कैसे बन पड़ता ? उस क्षमता को प्रेत जीवन में भी भले और बुरे प्रयोजनों के लिये प्रयुक्त करके पुण्य और पाप की मात्रा बढ़ाई जा सकती है।

मरणोत्तर जीवन में संस्कार क्षेत्र प्रौढ़ रहता है, विचार तन्त्र सो जाता है। जिस प्रकार के विचारों और कार्यों में मनुष्य जीवन भर रहता है वह अन्तः चेतना मरणोत्तर स्थिति में प्रबल रहती है

और अनायास ही उसी स्तर की गतिविधियों का क्रम चलता रहता है।

मरणोत्तर जीवन शान्त सुखी, परोपकारी स्थिति का रहे इस के लिए इसी जन्म में तैयारी करनी पड़ती है। उच्च विचार और शुद्ध जीवन रख कर जहां इहलौकिक जीवन सराहनीय और सम्मानित स्तर का रखा जा सकता है वहां उसका परिणाम मरणोत्तर काल में देवोपम हो सकता है। दुष्ट और दुरात्मा जीवन क्रम न इस लोक में सराहा जाता है न परलोक में शान्ति मिलने देता है। विक्षुब्ध, दुष्कर्म में निरत लोग न इस लोक में शान्ति पाते हैं न ही मुक्त हो पाते हैं।

घटनाएं चाहे मृतात्मा के रोष की हों अथवा अदृश्य रूप में सहायता की, वे अनुसंधान का एक नूतन क्षेत्र खोलती हैं आत्मा की अमरता, मरने के बाद भी उसका अस्तित्व, पुनर्जन्म, प्रेत-पितर योनि, कर्म-फल जैसे सिद्धान्त जिन्हें भारतीय अध्यात्म विज्ञान पूरी मान्यता देता आया है, इन घटनाओं से सत्यापित होते हैं। इस प्रकरण का डराने वाला एवं इस माध्यम से धूर्तता का चक्र चलाने वाला पक्ष तो निन्दनीय है। फिर भी इससे वर्तमान को श्रेष्ठ बनाने, चिन्तन की उत्कृष्टता बनाये रखकर देवत्व युक्त जीवन जीने की प्रेरणा मिलती है। 'परलोक सुधारना' सम्भवतः इसी को कहा जाता रहा हो। कुछ भी हो, प्रेत-पितरों के अस्तित्व के विषय में कोई सन्देह नहीं है। अदृश्य जगत का अन्वेषण कुछ और भी गहराई से हो तो कई महत्वपूर्ण सूत्र हाथ लग सकते हैं।

प्रेतयोनि: एक सच्चाई, एक तथ्य

मरणोत्तर जीवन के सम्बन्ध में विभिन्न धर्मों की विभिन्न मान्यताएँ हैं। भारतीय धर्म शास्त्रों ने भी मरने के बाद परलोक के सम्बन्ध में कितने ही प्रकार से प्रकाश डाला है। वे लोग, जो पुनर्जन्म के सम्बन्ध में विश्वास नहीं करते वे यह तो मानते ही हैं कि मरने के बाद मनुष्य का अस्तित्व नष्ट नहीं हो जाता। उसका अस्तित्व किसी न किसी रूप में विद्यमान रहता है। पुनर्जन्म में आस्था रखने वाले मत-मतान्तर भी यह मानते हैं कि मरने के बाद किसी भी व्यक्ति या प्राणी का तुरन्त जन्म नहीं हो जाता प्रश्न यह उठता है मरने और पुनः जन्म लेने के बीच की अवधि में जीवात्मा क्या करता है? इस अवधि में वह कहाँ रहता है? इन प्रश्नों के उत्तर तरह-तरह से दिये जाते हैं। परलोक के सम्बन्ध में जानकारी रखने और अन्वेषण करने वाले व्यक्तियों ने इस विषय में विभिन्न परीक्षण और प्रयोग कर यह जाना है कि इस अवधि में प्राणी को अशरीरी अवस्था में अपना अस्तित्व बनाये रखना होता है। भारतीय धर्मशास्त्रों ने इस स्थिति वाली अस्तित्व धारी जीवात्मा को ही प्रेत-योनि का नाम दिया है। मरने के बाद पुनः जन्म धारण करने के बीच की अवधि में प्रत्येक जीवात्मा को यह योनि धारण करनी पड़ती है।

जीवन-मुक्त आत्माओं की बात दूसरी है। वे किसी नाटक की तरह जीवन का खेल खेलती हैं और अभीष्ट उद्देश्य पूरा करने के

बाद अपने लोक में वापस लौट जाती हैं। उन्हें वस्तुओं, घटनाओं, स्मृतियों और व्यक्तियों का न तो मोह होता है न उनकी छाप उनके मन पर होती है, परन्तु सामान्य आत्माओं की बात भिन्न है। वे अपनी अतृप्त कामनाओं, सम्वेदनाओं, तृष्णाओं और रागद्वेष मूलक वासनाओं की प्रतिक्रियाओं से उद्विग्न होती हैं। परिणाम स्वरूप मरने के बाद भी उन पर जीवन के समय की स्मृतियाँ छाई रहती हैं और वे अपनी अभिलाषाओं की पूर्ति के लिए ताना-बाना बुनती रहती हैं। इस तरह की आत्माएँ दो स्तर की होती हैं, एक तो वे जो दूसरों को डराती दबाती हैं तथा उनके माध्यम से अपनी अभिलाषाएँ पूरी करती हैं। दूसरे वे जो अशरीरी रूप में बनी रहकर आत्मीयजनों की, परोपकारी. सुहृदमना व्यक्तियों की अहर्निशि सहायता करती रहती हैं। विक्षुब्ध मनःस्थिति वाली पहली श्रेणी की आत्माएँ प्रेत-योनि में रह रही कही जाती हैं एवं दूसरों को अदृश्य सहायता पहुँ-चाने वाली शुभ चिन्तक मृतात्माएँ पितर कहलाती हैं।

काल के अनन्त प्रवाह में सतत् प्रवाहशील जीवनधारा प्रेत-योनि एक नया मोड़ मात्र है। मनुष्य की सीमित इन्द्रिय संरचना, बोध जगत की दृष्टि से भले ही वह जीवनधारा खो गई प्रतीत होती हो, पर है वह सदा से ही अविछिन्न। शास्त्र कथन है कि मनुष्य का संस्कार क्षेत्र मरणोत्तर जीवन में पूर्णतः सक्रिय रहता है। अन्तकरण चतुष्टय मरणोपरान्त भी यथावत् बना रहता है जिनकी मनःस्थिति अशान्त विक्षुब्ध-सी बनी रही थी–वह अपना स्वभाव उसी रूप में बनाए रखती है। दुष्ट जीवन क्रम की स्वाभाविक परिणति जीवात्मा को जिस अशान्त मनःस्थिति में रहने को बाध्य करती है, उसका ही नाम प्रेतदशा है। वे जीवित अवस्था में तो रोतेकलपते–दुःख पाते ही हैं; मृत्यु के बाद भी अपना आतंक उन लोगों पर जमाने का प्रयास करते हैं, जिनका आत्मबल अविकसित हो। हिंसक व्यक्तियों की

कलुषित मनोवृत्तियाँ प्रेत जीवन में भी अपनी क्रूर आकांक्षाओं की किसी प्रकार पूर्ति करने का प्रयास करती हैं एवं मनोबल रहित व्यक्तियों को अनायास ही सताती रहती हैं।

प्रेत योनि एवं प्रेत माध्यम—

यह विषय मात्र वाक्‌विलास का नहीं, अपितु गहन शोध का है क्योंकि इससे परोक्ष जगत का रहस्योद्‌घाटन होता है, मरणोत्तर स्थिति में जीवन की गति की जानकारी मिलती है। डा० सी० डी० ब्राड सहित अनेकों वैज्ञानिको, परामनोवैज्ञानिकों ने 'मीडियम्स' (प्रेत के प्रभाव में आए व्यक्तियों) पर अध्ययन कर एक निष्कर्ष निकाला हैं। उनका कथन है कि मस्तिष्कीय संरचना जटिल है। वह शरीर के सम्मिलित संयोगों का 'प्रोडक्ट' है जिसमें एक अभौतिक चेतन तत्व भी शामिल है। इसे वे 'साइकिक फैक्टर' कहते हैं। व्यक्ति के मरने पर उसका शरीर समुच्चय बिखर जाता है किन्तु मस्तिष्क स्थित यह फैक्टर जो कि द्रव्य नहीं है नष्ट नहीं होता क्योंकि यह अभौतिक है। यह अवशिष्ट 'साइकिक फैक्टर' सूक्ष्म जगतमें परिभ्रमण करता रहता है लेकिन ऐसे व्यक्ति के मस्तिष्क को पाते ही उसमें प्रविष्ट हो जाता है, जो इन परिव्राजक घटकों के प्रति ग्रहणशील हो। ऐसे मस्तिष्क सामान्यतया कमजोर मनोभूमि वालों के होते है।' मालूम नहीं डा० का यह मत कहाँ तक विज्ञान सम्मत है लेकिन इसमें कोई सन्देह नहीं कि भूत-योनि जिस सूक्ष्म स्थिति में रहती होगी, सम्भवतः वह कुछ इसी प्रकार की होगी।

डॉ० ब्रॅड, विलियम काम्स और सर ओलिवर लाज की तरह ही विज्ञान के क्षेत्र में अन्य मूर्धन्य विद्वान भी मरणोत्तर जीवन और आत्मा के अस्तित्व पर अन्वेषण कर रहे हैं। इनमें से डा० ए० रसल वालेस और सर विलियम बारेट का नाम सर्वाधिक उल्लेखनीय है, जिन्होंने आत्मा के अस्तित्व को किन्हीं किंवदन्तियों

अथवा पूर्व प्रचलित मान्यताओं के आधार पर नहीं वरन् ठोस प्रमाणों के आधार पर ही स्वीकार और प्रतिपादित किया है।

इन विद्वानों द्वारा साइकिक फैक्टर संबंधी जिन घटनाओं का विश्लेषण किया गया, उनमें स्काटलैण्ड का एक विवरण बहुत ही रोचक और विस्मयजनक है। वहाँ सेण्ट कुर्री नामक गांव में जन्मे डेनियल डगलस होम को किसी प्रेतात्मा ने अपना माध्यम बना लिया था और वह उसके द्वारा विभिन्न संदेश देती रहती थी। डगलस का जन्म बहुत ही गरीब परिवार में हुआ था। चौदह वर्ष की आयु में वह तरह-तरह की बीमारियों से ग्रस्त रह कर दिन काटने लगा। इसी बीच उसे यह अनुभव होता रहा कि कोई प्रेतात्मा उसके साथ सम्बन्ध बनाती है और तरह-तरह के सकेत उसके माध्यम से पहुँचाती है। डरते-डरते उसने वे सदेश अपने घर वालों और पड़ौसियों को बताए। ये संदेश या पूर्व सूचनाएँ जब सही निकलीं तो उनका विश्वास बढ़ता गया और उससे समस्याएँ पूछ कर समाधान जानने वालों की सख्या बढ़ती गई।

एक दिन डगलस की चाची ने मेज पर भोजन की प्लेटें सजाई हुई थीं। वह किसी काम से बाहर गई हुई थीं और डगलस भीतर था। अचानक प्लेटों के आपस में टकराने की आवाज आई। चाची ने भीतर आकर देखा तो प्लेटें टूटी हुई थीं। उसने इसे डगलस की ही हरकत माना और उसे डांटने फटकारने लगी। बेचारा डगलस यही कहता रहा कि इसमें उसका कोई दोष नहीं है। तभी चाची ने दूसरी घटना यह देखी कि टूटे हुए टुकड़े अपने आप इकट्ठे होकर एक कोने में जमा हो रहे हैं। समेटने वाला कोई दिखाई नहीं पड़ता था। अब तो चाची को यह विश्वास हो गया कि इस घटना से डगलस का कोई सम्बन्ध नहीं है और यह उसी प्रेतात्मा की हरकत है जो डगलस से संबन्धित है।

डगलस को प्रेत पीड़ित जानकर उसकी चिकित्सा के लिए डा० कॉक्स के पास ले जाया गया, जो एक अच्छे चिकित्सक होने के साथ प्रेत विद्या में भी रुचि रखते थे। उन्होंने डगलस का उपचार तो किया ही, उसकी आत्मिक शक्ति बढ़ाने का भी उपक्रम किया ताकि वह परलोक की आत्माओं से अधिक अच्छा सम्पर्क बनाने में समर्थ हो सके। इस साधना से उसे आश्चर्यजनक सफलता मिली। उसे प्रेतात्माओं का प्रामाणिक संदेशवाहक माना जाने लगा। इस सन्दर्भ में ब्रिटेन के कई उच्चकोटि के वैज्ञानिक उससे अपना समाधान करने के लिए मिलने आने लगे और संतुष्ट होकर लौटे। इन ख्यातिनामा लोगों में ईवनिंग पोस्ट के सम्पादक विलियम कुलेन ब्रामेट प्रसिद्ध उपन्यास कार विलियम थेकर, विख्यात रसायन विज्ञानी सर क्रुक्स जैसे मूर्धन्य लोगों के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

आत्मिकी के वेत्ताओं का अभिमत है कि आत्मबल का सम्यक् विकास न होने एवं विघटित मनःस्थिति वाले व्यक्तियों पर ही प्रेतात्माओं का प्रभाव पड़ता है। प्यार का अभाव, असुरक्षा की आशंका, मूर्खतापूर्ण कठोरता से भरा नियन्त्रण, अत्यधिक चिन्ता, कुसंग से उत्पन्न विकृतियाँ व्यक्ति के विकास क्रम को जब तोड़-मरोड़कर रख देती हैं तो ऐसा व्यक्ति मनो विकृतियों का शिकार बन जाता है। प्रेतात्मायें दुर्बल, दूषित मनःस्थिति वाले व्यक्तियों को अपना क्रीड़ा-क्षेत्र न भी बनायें तो भी वह मानसिक विकारों का शिकार होता या अन्य उन्मत्त आचरण करने के लिए प्रेरित या बाध्य होता है। उसका जीवन अन्ततः अनगढ़ बन जाता है।

पातञ्जलि ऋषि योगदर्शन के द्वितीय पाद में कहते हैं—

क्लेश मूलः कर्माशयो दृष्टादृष्ट जन्मवेदनीयः।
सतिमूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगाः॥

अर्थात्—"सब प्रकार के क्लेशों के मूल में जीव द्वारा किए गए

कर्म ही प्रधान हैं। उन्हीं के द्वारा उसकी जाति आयु एवं सुख-दुःख भोग का निर्धारण होता है।"

इसी बात को योगवाशिष्ठ में महर्षि वशिष्ठ ने भगवान् राम को समझाते हुए शुभाशुभ कर्म और तदनुरूप योनि प्राप्त होने के वर्णन के रूप में विस्तार से कहा है—

एवं जीवाश्रिता भावा भवभावन मोहिताः
कालेन पदमागात्य जायन्ते नेह ते पुनः॥

इस सन्दर्भ में एक पक्ष और भी विचारणीय है। वह यह कि जीव सत्ता अपनी संकल्प शक्ति का स्वतन्त्र घेरा जीव के चारों ओर बनाकर खड़ा कर देती है और जीव को अन्य योनि प्राप्त होने के उपरान्त भी वह संकल्प सत्ता उसका कुछ प्राणांश लेकर अपनी एक स्वतन्त्र इकाई बना लेती है। वह इस प्रकार बनी रहती है, मानो कोई दीर्घजीवी सूक्ष्मजीवी ही वहाँ विद्यमान हो। अति प्रचण्ड संकल्प वाला ऐसी कितनी ही आत्माओं का परिचय समय-समय पर मिलता रहता है। लोग इन्हें 'पितर' नाम से देव स्तर की संज्ञा देकर पूजते पाये गए हैं।

पदार्थ का प्रेत 'प्रति पदार्थ', विश्व का प्रेत 'प्रति विश्व छाया पुरुष' की तरह साथ-साथ विद्यमान रहता है। उसकी चर्चा विज्ञान जगत में इन दिनों प्रमुख चिन्तन का विषय बनी हुई है। मनुष्य का भी प्रेत होता है, यह अब माना जाने लगा है एवं कई ऐसे नये तथ्य प्रकाश में आये हैं जिनसे महत्वपूर्ण घटनाओं के, महत्वपूर्ण पदार्थों के और प्रचण्ड सत्ताओं के भी प्रेत होने की बात सच प्रतीत होती है। स्थूल रूप से नष्ट होने पर सूक्ष्म रूप में उनका अस्तित्व परोक्ष जगत में प्रतिविश्व—एण्टीयूनीवर्स में बना रहता है। यहीं से वे अपने क्रिया-कलाप सतत चलाते रहते हैं।

वस्तुतः भौतिक संसार की भांति ही इस लोक के इर्द-गिर्द एक

अन्य संसार का जो अस्तित्व है। यह सूक्ष्मलोक कहलाता है। मरणोपरांत जीवन व्यक्ति इसी लोक में गुजारते हैं, किन्तु व्यक्ति के गुण-कर्म-स्वभाव और व्यक्तित्व के स्तर के आधार पर इसके भी कई विभाजन हैं। योगी, यति स्तर के व्यक्तियों का लोक श्रेष्ठतम माना गया है। जीवनमुक्त स्थिति में वे इसी लोक में निवास करते और भौतिक दुनिया की ही तरह सुखोपभोग करते रहते हैं। यहाँ भी वे वैसा ही शान्तिमय जीवन जीते हैं, जैसा कि सशरीरी अवस्था में क्षुद्र और निकृष्ट स्तर के वासना और तृष्णा में लिप्त व्यक्तियों की अशरीरी दुनिया भी उसकी सशरीरी दुनिया की भांति ही क्षोभपूर्ण और दुःख-दायी होती है। यहाँ भी वे अपने उन कुकृत्यों से विलग नहीं रह पाते, जिसने उनका भौतिक जीवन कुमार्गगामी नरक तुल्य बनाया। वे हर वक्त वासना और प्रतिकार अग्नि में जलते, दूसरों को जलाते प्रताड़ित करते शान्ति की खोज में दर-दर भटकते रहते हैं। यही अतृप्त आत्मायें प्रेत-पिशाच के नाम से जानी जाती हैं, जिनका एक मात्र लक्ष्य दूसरों को नुकसान पहुँचाना होता है।

सूक्ष्म शरीर में रहने के कारण इन्हें कुछ शक्ति तो अवश्य प्राप्त होती है, पर उतनी नहीं, जिससे बड़े-बड़े काम कर सकें। शक्ति उतनी ही होती है, कि वे यदा-कदा अपना अस्तित्व प्रकट कर कुछ उल्टी-सीधी हरकतें कर सकें। इसी क्षणिक अस्तित्व और अत्यल्प शक्ति से वे अपने दुष्टतापूर्ण कुकृत्य सम्पन्न करते और क्षण भर में विलोप होते देखे जाते हैं। कभी-कभी वे अपनी इच्छापूर्ति के लिए दूसरे व्यक्ति के शरीर का भी उपयोग करते देखे जाते हैं। दूसरों को माध्यम बनाकर अपनी वासना-तृप्ति भी कर सकते हैं, अथवा कभी किसी को कोई आवश्यक सूचना देनी हो, तब भी वे ऐसे ही क्रिया-कृत्यों का अवलम्बन लेते हैं। परन्तु इन कार्यों के लिए वे प्रायः दुर्बल

मन:स्थिति वाले व्यक्तियों का ही सहारा लेते हैं। सबल और दृढ़ इच्छा शक्ति उनकी अधीनता नहीं स्वीकारती।

यदा-कदा ऐसी घटनायें प्रकाश में आती रहती हैं, जिसमें एक व्यक्ति के मरणोपरान्त तुरन्त उसके शरीर पर दूसरी आत्मा ने स्थायी रूप से अपना आधिपत्य जमा लिया। रूस के यूरा प्रान्त में मोरखर्न नगर में इब्राहीम चारको नामक एक यहूदी रहता था। एक बार वह गम्भीर रूप से बीमार पड़ा। कुछ दिनों बाद हृदय की धड़कन बन्द होने पर डाक्टरों ने उसे मृत घोषित कर दिया। उसे दफनाने की तैयारी चल रही थी। इतने में उसकी चेतना पुनः वापिस लौटी और वह उठ बैठा। पर अब उसकी स्थिति बिल्कुल ही भिन्न थी। उसने अपने ही कुटुम्ब के सदस्यों को पहिचानने से इन्कार कर दिया। वह अपनी मूल भाषा हिब्रू न बोल कर 'लैटिन' में बात करने लगा। उसने अपने को ब्रिटिश कोलम्बिया का एक चिकित्सक बताया। नाम था इब्राहीम इरहम। खोजबीन की गई तो मालूम हुआ कि 'न्यूवेस्ट मिस्टर' में इब्राहीम इरहम नामक एक चिकित्सक की मृत्यु कुछ दिनों पूर्व हुई है। उनकी पत्नी एवं बच्चे भी हैं। कोलम्बिया के समाचार पत्रों में 'इब्राहीम चारको के शरीर में इरकम की आत्मा ने आत्मा का प्रवेश' शीर्षक से इस सम्बन्ध में विस्तृत समाचार छपा। इब्राहीम चारको के शरीर में प्रविष्ट इब्राहीम इरहम की अपनी पत्नी से मिल कर परिचय दिया। पहले तो पत्नी को विश्वास नहीं हुआ पर उसने ऐसे रहस्यों का उद्घाटन किया जो मात्र इरहम और उसकी पत्नी की जानकारी तक सीमित थे साथ ही उसका स्वभाव भी बिल्कुल इरहम जैसा ही था। फलस्वरूप पत्नी को मानना पड़ा कि इब्राहीम चारको के शरीर में उसके पति की आत्मा ही है।

इसी से मिलती-जुलती एक घटना द्वितीय विश्व युद्ध की है। दो अमेरिकी सैनिक युद्ध के एक मोर्चे पर घायल हो गये नाम थे—

डान और बॉब। डान की मृत्यु हो गयी पर उपचार के बाद बॉब ठीक हो गया। पर शरीर से बॉब होते हुए भी उसकी मूल प्रकृति बॉब जैसी नहीं थी। ठीक होते ही वह अपने को 'डान' कहने लगा। युद्ध समाप्त होने पर वह अपने घर न आकर डान के घर पहुँचा। डान के परिवार के सदस्यों से उसने अपना परिचय डान के रूप में दिया। आकृति की भिन्नता के कारण परिवार वालों ने पहले तो उसे पागल समझा किन्तु उसने डान के जीवन की अनेकों प्रामाणिक घटनाओं का उल्लेख किया। उसकी आदत अभिरुचियाँ भी ठीक डान जैसी थीं। इसी बीच घर वालों को सूचना मिली कि डान को युद्ध मोर्चे पर गोली लगने से मृत्यु हो गयी। अन्ततः सबको यह मानना पड़ा कि बॉब के शरीर में डान की आत्मा ने प्रवेश कर अपना आधिपत्य जमा लिया है।

एक अन्य घटना स्पेन की है। एक बार हाला और मितगोल नाम की दो लड़कियाँ अपने अभिभावकों के साथ बस से वापिस लौट रही थीं। मार्ग में बस दुर्घटनाग्रस्त हो गयी। अनेकों व्यक्ति मारे गए। दोनों लड़कियाँ भी बुरी तरह घायल हो गयीं। मितगोल की कुछ घण्टों बाद मृत्यु हो गयी। हाला इसके कुछ समय बाद होश में आई। पर अब वह शरीर से 'हाला' होते हुए भी हाला न थी। मितगोल एवं हाला दोनों के अभिभावक घटनास्थल पर मौजूद थे। हाला के पिता ने उससे घर चलने को कहा पर उसने उनके साथ जाने से इन्कार कर दिया। उसने बताया कि वह हाला नहीं मितगोल है। वह मितगोल के पिता के पास पहुँची तथा घर चलने के लिए आग्रह करने लगी। हाला के पिता ने समझा शायद दुर्घटना से उसका मानसिक संतुलन बिगड़ गया हो। वे उसे जबरन घर ले गए, पर वह किसी भी घर के सदस्य को पहचान न सकी और निरन्तर यह रटती रही कि वह हाला नहीं मितगोल है। हाला को लेकर उसके अभिभावक मितगोल के घर पहुँचे। तुरन्त ही वह मितगोल की माँ को देखते ही

जा लिपटी और फूट-फूट कर रोने लगी। मितगोल के पिता उसके दुर्घटनाग्रस्त शरीर को स्वयं दफना चुके थे, पर ह्वाला का स्वभाव शत-प्रतिशत मितगोल जैसा था। मितगोल से सम्बन्धित अनेक पूर्व जीवन की घटनाओं का उसने सही वर्णन कर सबको आश्चर्यचकित कर दिया।

जीवात्मा द्वारा शरीर रूपान्तरण की ये घटनायें भौतिकवाद की इस मान्यता का खण्डन करती है कि वृक्ष-वनस्पतियों की भाँति मनुष्य भी एक चलता-फिरता पौधा है। जड़-पिण्डों की तरह एक दिन नष्ट हो जाता है। आदि और अन्त, जीवन और मरण से परे अपनी स्वतन्त्र सत्ता का बोध कराने के लिए ही सम्भवतः आत्म सत्ता इन विलक्षण घटनाओं के रूप में अपना परिचय देती है।

अतृप्त आकांक्षायें सतत् विद्यमान—

वस्तुतः मृत्यु के बाद जीवात्मा की अतृप्त आकांक्षायें एवं वासनायें स्थूल शरीर के साथ समाप्त नहीं हो जातीं वरन् सूक्ष्म शरीर के साथ उनके संस्कार सतत् बने रहते हैं। यही अतृप्त वासनायें एवं इच्छायें मृत्यु के उपरान्त भी जीवात्मा को उद्विग्न बनाये रहती हैं, जिसकी पूर्ति के लिए जीवात्मा को प्रेत-योनि धारण करनी पड़ती है।

प्रत्येक धर्मशास्त्र वस्तु एवं व्यक्ति से मोह एवं आसक्ति के परित्याग की बात कहता है। द्रष्टा ऋषियों एवं मनीषियों द्वारा शास्त्रों धार्मिक ग्रन्थों में प्रतिपाद्य यह सिद्धान्त कभी अवैज्ञानिक नहीं हो सकता। उनके कथन के पीछे ठोस मनोवैज्ञानिक आधार हैं। वे इस तथ्य से अवगत थे व्यक्ति अपने साथ जीवन काल के संस्कार को सूक्ष्म शरीर के साथ लेकर मरता है। यदि वे संस्कार निम्नस्तर के अतृप्त वासनाओं एवं इच्छाओं के होते हैं तो मृत्यु के उपरान्त भी जीवात्मा को उद्विग्न बनाये रहते हैं। जीवात्मा को इनके रहते हुए कभी शान्ति नहीं मिल पाती। इन अतृप्त इच्छाओं की पूर्ति के लिए ही जीवात्मा

प्रेत योनि में भटकती रहती हैं तथा जिस भी व्यक्ति, अथवा वस्तु में आसक्ति अथवा विद्वेष रहता है उसके आस-पास मँडराती रहती हैं।

इंग्लैण्ड की एक सुप्रसिद्ध घटना है। हालीवुड की अभिनेत्री 'किमनोवाक' 'द अमोरस एडवेंचर्स माल फ्लैण्डर्स' फिल्म की शूटिंग के लिए इंग्लैण्ड गयी थी। आउट डोर शूटिंग के लिए 'कंटरबरी' में स्थित 'चिलहम कैसल' नामक प्राचीन किले के आस-पास का स्थान चुना गया। इस किले का अधिकांश भाग बारहवीं सदी का बना है। शेष भाग ३०० वर्ष पूर्व बनाया गया है। किले के जिस भाग में अभिनेत्री 'किमनोवाक' को ठहराया गया वह बारहवीं सदी का था। बिजली आदि सुविधायें बाद में की गयी थीं। किम नोवाक शूटिंग के उपरान्त थक कर वापस लौटती, भोजन करने के बाद थोड़ी देर टेलीविजन देखती, तदुपरान्त सो जाती। यह क्रम नित्य का था।

एक रात्रि टेलीविजन में संगीत चल रहा था। संगीत के जादुई प्रभाव से किम के पांव संगीत लहरों के साथ थिरकने लगे, वह नृत्य करने में तन्मय हो गयी। अचानक उसे ऐसा लगा कि किन्हीं बलिष्ठ हाथों ने उसे घेर लिया है तथा जबरन नृत्य करवा रहा है। आरम्भ में उसने इसे मन का भ्रम समझा किन्तु जब उसने अपने थिरकते हुए पैरों को नृत्य से रोकना चाहा तो पाया कि किसी व्यक्ति के दो हाथ उसे जबरन घुमा रहे हैं। न चाहते हुए भी वह नृत्य करने के लिए बाध्य थी। देखने पर सामने कोई स्पष्ट नहीं दिखायी दे रहा था। भय से शरीर से पसीना निकलने लगा। टेलीविजन पर संगीत की ध्वनि धीमी हो गयी किन्तु उस अदृश्य व्यक्ति पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वह अपने साथ अभिनेत्री किम को तेजी से नचाये जा रहा था। काफी समय के बाद अदृश्य हाथों की पकड़ समाप्त हुई। किम बेहोश होकर एक किनारे गिर पड़ी। चैतन्य स्थिति में आने पर

उसने कमरे में चारों ओर दृष्टि दौड़ाई किन्तु कोई भी दिखाई नहीं पड़ा।

इस घटना का उल्लेख अभिनेत्री किम ने तत्काल अपने किसी साथी से नहीं किया तथा उत्सुकतावश आगे क्या होता है, यह देखने के लिए अन्दर साहस बांधने लगी। उस रात के बाद उसने टेलीविजन देखना तो छोड़ दिया किन्तु अदृश्य प्रेतात्मा अपनी उपस्थिति का प्रमाण अन्य रूप में देने लगी। किम कमरे की बत्ती जलाती तो वह गुल कर देता। बत्ती बुझाकर वह सोने जाती तो कोई हाथ आगे बढ़ कर बिजली का स्विच आन कर देता। कितनी बार कमरे की रखी व्यवस्थित वस्तुयें अस्त-व्यस्त फैली हुई मिलतीं। कभी-कभी खिड़की के दरवाजे बन्द होने पर भी उन पर लगे परदे जोरों से हिलने लगते कई बार किम ने अनुभव किया कि 'कोई' उसके हाथों से पहनने वाले कपड़े छीनने का प्रयास कर रहा है। शूटिंग के सत्तरह दिन में प्रत्येक रात्रि इन घटनाओं का क्रम चलता रहा। फिल्म की शूटिंग की समाप्ति पर सारी घटनाओं का उल्लेख किम ने अपने साथी अभिनेता रिचर्ड जानसन से किया।

रिचर्ड जानसन को उक्त महल में रहने वाली प्रेतात्मा की जानकारी पहले से थी। उसने कहा कि "वह प्रेतात्मा तेरहवीं सदी के प्रसिद्ध राजा 'किंग जान' की है। ११ अक्टूबर १८१६ को राजा 'जान' अपने दुश्मनों के चंगुल से भागकर शरण प्राप्त करने के लिए उसी किले में रुका था। दूसरे दिन 'किंग जान' एक खाई को पार करने का प्रयास कर रहा था तो नौका दुर्घटना में उसकी मृत्यु हो गयी। उसकी आत्मा की आसक्ति इस किले के साथ अब भी बनी है। जानसन ने कहा कि मृतात्मा 'जान' की उपस्थिति पिछले साढ़े चार सौ वर्षों से इस किले में बनी हुई है। इसका आभास समय-समय पर उस कमरे में रुकने वालों को होता रहता है।

ब्राजीलवासी श्रीमती इडा लारेंस को 'सियान्स' (मृतात्माओं के आह्वान सम्बन्धी बैठकें) में तीन बार उनकी पुत्री इमिलिया की मृतात्मा ने सन्देश दिया कि मैं अब तुम्हारे पुत्र के रूप में जन्म लूँगी। इमिलिया को अपने लड़की होने से घोर असंतोष था। वह अक्सर कहा करती थी कि यदि पुनर्जन्म सचमुच होता है, तो अगले जन्म में मैं पुरुष बनूँगी। उसने अपने विवाह के सभी प्रस्ताव ठुकरा दिए और २० वर्ष की आयु में विष खाकर मर गई। बाद में 'सियान्स' में इमिलिया ने अपनी माँ से अपनी आत्म-हत्या पर पश्चात्ताप व्यक्त किया साथ ही पुत्र रूप में अपने पुनर्जन्म की इच्छा व्यक्त की।

श्रीमती इडा लारेंस अब तक १२ बच्चों को जन्म दे चुकी थीं और अब सन्तान की उन्हें सम्भावना नहीं थी। पर इमिलिया की मृतात्मा का सन्देश सत्य निकला। अपनी मृत्यु के डेढ़ वर्ष बाद इमिलिया ने पुत्र रूप में पुनर्जन्म लिया। उसका नाम रखा गया—पोलो।

पोलो की रुचियाँ और प्रवृत्तियाँ इमिलिया जैसी ही थीं। सिलाई में इमिलिया निपुण थी, तो पोलो भी बिना सीखे ही ४ वर्ष की आयु में सिलाई में दक्ष हो गया। इमिलिया ही की तरह पर्यटन पोलो को भी प्रिय था। इमिलिया एक खास ढङ्ग से डबल रोटी तोड़ती थी। पोलो में भी वही अन्दाज पाया गया। पोलो अपनी बहिनों के साथ कब्रिस्तान जाता, तो सिर्फ इमिलिया की कब्र पर ही फूल चढ़ाता। वह भी यह कहते हुए कि—"मैं अपनी कब्र की देखभाल कर रही हूँ।' शुरू में पोलो की बातें लड़कियों जैसी ही थीं। उसके व्यक्तित्व में अन्त तक नारी तत्वों की प्रधानता रही। अपनी बहिनों के अतिरिक्त अन्य स्त्रियों के प्रति उसमें लगाव नहीं था और वह अविवाहित ही रहा। मनोवैज्ञानिक और परामनोवैज्ञानिकों ने उसका परीक्षण किया। उसमें स्त्री सुलभ प्रवृत्तियाँ पाई गयीं।

इसी तरह श्रीलंका की एक बालिका ज्ञानतिलक ने दो वर्ष की आयु में बताया कि पूर्व जन्म में वह लड़का थी। पूर्वजन्म वाले स्थान से एक दिन जब वह गुजरी तो सहसा उसके दिमाग में कौंधा कि वह पूर्व जन्म में यहीं पर थी। उसने अपने पूर्वजन्म की कई बातें बतायीं जो सत्य निकलीं। ज्ञानतिलक का पूर्व जन्म का नाम तिलकरत्न था। इमिलिया को लड़का होने की तीव्र इच्छा थी, तो तिलकरत्न में नारी व्यक्तित्व की प्रधानता थी और पुनर्जन्म में वह लड़की ही बनी। साथ ही पुरुष बनी इमिलिया में नारी प्रवृत्ति अवशिष्ट थी, तो नारी बनें तिलकरत्न में पुरुष प्रवृत्तियाँ विद्यमान थीं। इन सब विचित्रताओं का कारण है वह अतृप्त आकांक्षा जिसे मन में लिए पूर्व आत्मा सूक्ष्म रूप में भ्रमण करती रही व उसने अपनी इच्छा पूरी की।

अपनी पूर्वजन्म की वस्तुओं से अत्यन्त लगाव होने के कारण मृतात्मायें उस स्थान पर किसी को देखकर या वस्तुओं का उपयोग होते देख भड़क उठती हैं।

आस्ट्रेलिया के सिडनी नगर में एक निःसन्तान मालिक की किसी दुर्घटना में यकायक मृत्यु हो गयी। उसकी एकमात्र सम्पदा सरकार की हो गई। सरकार ने उसे फ्रैंक नामक किरायेदार को फर्नीचर समेत उठा दिया। पर उसने आये दिन रात्रि के समय दैत्याकार प्रेत की घुस पैठ से दुःखी होकर खाली कर दिया। इसके बाद एक प्रोफेसर ने उसे लिया। वे प्रेतवाद को अन्ध-विश्वास भर मानते थे। पर उनने भी अपनी आँखों से जो दृश्य देखे, उनका ब्यौरा जहाँ-तहाँ बताये बिना मकान खाली कर दिया। इसके बाद उसे माइकेल ब्रूम ने लिया पर जब उनका सारा परिवार आतंकित हो उठा तो वे भी चले गये। इसके बाद जो नया किरायेदार आया उसने चौकीदारों और पुलिस मैनों की व्यवस्था की पर आँगन और बरामदे में पत्थर बरसने का पता न लगा सकने पर उनने भी हिम्मत खो दी और छोड़कर

चले गये। एक महीने की उस उठक-पटक के बाद वह मकान अभी तक खाली पड़ा है।

बेथेसडा कम्युनिटी डेवलपमेण्ट के इनचार्ज प्रो० निक्सन अपने काम में बड़े मुस्तैद थे। दिन भर इनक्वारियां करते और रात को दफ्तर का काम निपटता तो उस समय वे अकेले होते। इस बेला में उनकी कुर्सियां हरकत करतीं एक जगह से दूसरी जगह खिसकती देखी गईं। और उन पर बैठने वाली शकलें प्रकट एवं गायब होती देखी गईं। अगले दिनों उनने कुछ साथियों को काम करने के लिए रोक लिया। उनने भी यह विचित्र लीला देखी। एक दिन तो एक कुर्सी छत में जाकर चिपक गई।

पुलिस द्वारा जांच पड़ताल कराई गई पर घटनाओं का कारण विदित न होने पर उनने भी रात का काम दफ्तर में करने की बजाय घर पर करना आरम्भ कर दिया।

बिलासपुर के रेलवे यार्ड के समीप अंग्रेजी शासनकाल में दो योरोपियन पति-पत्नी रहते थे। जोसेफ और मेरिया। उनकी उसी बंगले में मृत्यु हो गई। झूला झूलने का उन्हें बहुत शौक था। उनके न रहने के बाद भी झूला इस प्रकार हिलता था मानो उस पर दो व्यक्ति बैठे झोंके ले रहे हैं। उस क्षेत्र के लोग भयभीत रहने लगे तो झूला उतार दिया गया। आतंक की कार्यवाहियां पुनः उस बंगले में वस्तुओं के इधर उधर होने के रूप में होने लगीं तो झूला पुनः लटका दिया गया किन्तु वह घर फिर निर्जन हो रहा।

प्रेतों से जुड़ा इंग्लैण्ड का राज परिवार—

इंग्लैण्ड का राजपरिवार प्रेतलीला से विशेष रुचि रखता रहा है। वहां के अधिकांश पुराने कैसल्स (किले) प्रेतों के निवास

गृह माने जाते हैं। जितना अधिक विश्वास प्रेतों पर इस राष्ट्र में किया जाता है, उतना संभवतः पुनर्जन्म को मानने वाले देश भारत में नहीं किया जाता।

इंगलैंण्ड का विण्डसोर महल प्रेतों का निवास गृह होने के रूप में प्रख्यात है। ऐलिजावेथ प्रथम को पुस्तकें पढ़ने का बहुत शौक था उनका प्रेत अक्सर इस महल के पुस्तकालय में देखा जाता है। चार्ल्स प्रथम को तोपखाने से बहुत लगाव था उनकी आत्मा तोपखाने में दृष्टि गोचर होती है। हेनरी अष्टमको गठिया की शिकायत थी वे महल के आँगन पर लड़खड़ाते हुए घूमते हैं। तीसरे जार्ज को अन्धेरा पसन्द था वे अब भी महल की जलती बत्तियाँ बुझा देते हैं। विण्डसोर के पार्क में शिकारी हर्न अभी भी अपने शिकारी कुत्ते दौड़ता हुआ देखा जाता है।

इङ्गलैण्ड की वर्त्तमान राजमाता बचपन में स्काटलैण्ड के 'ग्लेसिल कैसल' में पली थी। उसी किले में भूतों की घुस-पैठ थी। खासतौर से उनके 'कल्‌रूम' में। कर्मचारियों और दर्शकों ने उस क्षेत्र में भयभीत करने वाली घटनाएं देखीं और उस क्षेत्र में जाने से कतराने लगे। राजमाता ने अपने अनुभव सुनाने की अपेक्षा मुस्करा भर देने से काम चलाया पर उन घटनाओं का खण्डन उनने भी नहीं किया लार्ड स्ट्रेक मेरु पर तो ऐसा भय सवार हुआ कि उनने वहाँ जन्म दिन मनाना ही बन्द कर दिया।

इंगलैण्ड के राज परिवार में अशरीरी प्रेतात्माओंका अस्तित्व चिरकाल तक अनुभव किया जाता रहा है। इस सम्बन्ध में डा० लोज की लिखी तीन पुस्तकें न केवल मरणोत्तर जीवन पर प्रकाश डालती हैं—वरन् राज परिवार को इस प्रकार की क्या अनुभूतियां होती रही इसको भी चर्चा करती हैं।

उन दिनों राज्य सिंहासन पर पंचम जार्ज अवस्थित थे। उनकी

पश्चिम राजकुमारी 'लुईस' सुहाग के बहुत थोड़े दिन देख पाई और विधवा हो गई। लुईस को अपने पति के प्रति गहरी अनुरक्ति थी। वह उनके दिवंगत हो जाने के उपरान्त भी बनी रही और यह सम्बन्ध सूत्र बनाये रखना दिवंगत आत्मा ने भी स्वीकार कर लिया वे प्रेत रूप में लुईस के पास बराबर आते रहे और उससे सम्पर्क बनाये रहे। लुईस भी बहुत दिन जीवित नहीं रही। उसकी मृत्यु के उपरान्त राज-कुमारी की सचिव एलिजाबेथ गोर्डन ने विस्तार पूर्वक प्रकट किया- जिससे उस घटना क्रम पर प्रकाश पड़ता है जिसके अनुसार लुईस और उनके स्वर्गीय पति का मिलन—संभाषण, सान्निध्य का क्रम कितनी घनिष्ठता पूर्वक चलता रहा मानो शरीर न रहने पर भी ड्यूक का अस्तित्व यथावत् बना रहा हो।

इससे पूर्व की एक और घटना है जो प्रेतात्माओं के अस्तित्व को और भी अच्छी तरह प्रमाणित करती है। सम्राट एडवर्ड सप्तम की पत्नी महारानी एलेग्जेण्ड्रा प्रेत विद्या पर विश्वास करती थी और जब तब मृतात्माओं के आह्वान का प्रयोग किया करती थी। एक बार ऐसे ही प्रयोग (सियांस) से इन्हें ऐसा सन्देश मिला, जिसे एक तरह का विस्फोट ही कहना चाहिए। उन्हें प्रेत द्वारा सूचना दी गई कि सम्राट एडवर्ड अब कुछ ही दिन जीवित रह सकेंगे उनकी उसी कोठे में मृत्यु होगी जिसमे कि वे जन्मे थे।'

महारानी उन दिनों 'विंडसर प्रासाद में थीं। उन्हें समाचार मिला कि सम्राट् कुछ साधारण से अस्वस्थ हैं पर चिन्ता जैसी कोई बात जरा भी नहीं है। तो भी महारानी का समाधान न हुआ। वे दौड़ती हुई पहुँचीं और देखा कि एडवर्ड बेहोश पड़े हैं। रानी को देखने के लिए उन्होंने आंखें खोलीं और प्राण त्याग दिये।

एडवर्ड की आत्मा का अस्तित्व मृत्यु के बाद भी अनुभव किया जाता रहा। उनकी एक अन्तरंग मित्र थी—लेडी वारविक। कुछ

दिन प्रेत विद्या विशारद 'एटा राइट' के माध्यम से वे लेडी वारविक पर अपना अस्तित्व प्रकट करते रहे। इसके बाद उनने सीधा सम्पर्क स्थापित कर लिया। वे अक्सर अपनी प्रेयसी के पास आते और जर्मन भाषा में वारविक के साथ अपनी अतृप्त प्रणय आकांक्षायें व्यक्त करते।

'स्प्रिच्युअलिस्ट एलायन्स' में अभी भी एक ऐसी घड़ी ऐतिहासिक सुरक्षा के साथ रखी हुई है जो मरणोत्तर जीवन के अस्तित्व की मान्यता पर राज्य परिवार की स्वीकृति का प्रमाण देती है। यह घड़ी महारानी विक्टो-रिया ने इस चक्र की सदस्याकुमारी जार्जियाना ईगल को—उनके प्रेत आह्वान की यथार्थता अनुभव करके भेंट में दी थी। कुमारी ईगल ने महारानी विक्टोरिया के सम्मुख प्रेतों के अस्तित्व और आह्वान की प्रामाणिकता के ऐसे अनेक सबूत पेश किये थे जिनके कारण विक्टोरिया को इस तथ्य पर पूरी तरह विश्वास जम गया था। सन् १६०१ में महारानी विक्टोरिया की भी मृत्यु हो गई। प्रेत आह्वान संस्थान ने उनके साथ भी सम्पर्क बनाया। सस्थान की संचालिका ऐटा राइट ने एक दिन स्वर्गीय महारानी की आवाज प्रत्यक्ष सुनवाई तो सभी सुनने वाले अवाक् रह गये।

महारानी विक्टोरिया (वर्तमान राजमाता की माँ) का मरणोत्तर जीवन पर प्रगाढ़ विश्वास प्रख्यात था। वे १८१ में जन्मीं। १८ वर्ष की आयु में सन् १८३७ में राजगद्दी पर बैठीं। तीन वर्ष बाद १८४० में उनका विवाह हुआ और कुछ वर्ष बाद वे विधवा हो गईं। महरानी ने अपने स्वर्गीय पति प्रिंस अलवर्ट से सम्बन्ध स्थापित करने में सफलता प्राप्त करली। इस कार्य में उन्हें आर० डी० लीज और जान पाउन नामक दो प्रेत विद्या विशारदों स बड़ी सहायता मिली। स्वर्गीय अलवर्ट जीवन काल की तरह मरने के उपरान्त भी महारानी को प्रत्येक कार्य में परामर्श और सहयोग प्रदान करते रहे। विधवा

रहते हुए भी उन्हें सर्वथा एकाकीपन अनुभव न होने देने के लिए स्वर्गीय आत्मा उनके साथ घनिष्ट सम्बन्ध बनाये रही।

अलबर्ट अपनी सूक्ष्म सत्ता को स्थूल रूप से प्रकट करने के लिए डी० ब्राउन के शरीर का सहारा लेते थे। जो कहना होता वे उन्हीं के शरीर में प्रवेश करके कहते। महारानी मि० लीजके प्रति बहुत कृतज्ञ थीं। जिनने ब्राउन के रूप में एक अधिकारी माध्यम लाकर उन्हें दिया था। प्रेतात्माऐं हर शरीर के माध्यम से अपना अस्तित्व प्रकट नहीं कर सकतीं। उसके लिए उन्हे अधिकारी व्यक्ति चाहिए। इसके लिए मि० ब्राउन सर्वथा उपयुक्त प्रमाणित हुए। लीज द्वारा उपयुक्त माध्यम की व्यवथा की थी। सो इस सहायता के बदले में उच्च राज्य पद देने का प्रस्ताव कई बार किया पर लीज ने उसे सदा यह कह कर अस्वी-कार कर दिया कि—"आत्मिक जिम्मेदारियों का बोझ इतना अधिक होता है कि उसे वहन करते हुए लौकिक कार्यों को ठाक प्रकार नहीं किया जा सकता है। दोनों में से एक कार्य ही प्रमुख रह सकता है।' राज्य पद न लेने के इस तर्क को महारानी ने उचित समझा और उनसे इसी स्तर का सहयोग लेती रहीं।

महारानी विक्टोरिया को अपने स्वर्गीय पति का सहयोग हर कार्य में अभीष्ट प्रतीत होता था, उनके परामर्श की उन्हें निरन्तर आवश्यकता अनुभव होने लगी। परोक्ष सन्देशों के अधूरे पन और सन्देश की आशंका रहती थी। अस्तु ब्राउन के शरीर माध्यम से प्रत्यक्ष सन्देशों के आदान-प्रदान की आवश्यकता अनुभव की गई। इसके लिए ब्राउन के शरीर और अलबर्ट की आत्मा का समन्वय ऐसा उपयुक्त सिद्ध हुआ कि महारानी के दुखी जीवन में उपयुक्त सहारा मिल गया और वे इतने से भी बहुत हद तक अपने भार में हलकापन अनुभव करने लगीं।

ईश्वर की इच्छा प्रबल ठहरी जान ब्राउन का भी स्वर्गवास हो गया । महारानी विक्टोरिया को इससे बड़ा आघात लगा मानो उनका दाहिना हाथ ही टूट गया हो । जान ब्राउन की सुन्दर सी कब्र पर महारानी विक्टोरिया के यह उदगार लिखे हुए हैं—

'मुझ वियोगिनी और व्यथिता के लिए—वरदान स्वरूप एक विलक्षण व्यक्ति की स्मृति ।" महारानी ने उनके प्रति अपनी भावनाऐं व्यक्त करते हुए "स्वामिभक्त साथी और विश्वस्त मित्र" के रूप में सम्बोधित करते हुए अपनी भाव सम्वेदना व्यक्त की ।

शरीर त्याग के बाद भी आत्माओं का अस्तित्व बना रहता है । यदि सम्पर्क का उपयुक्त माध्यम बन सके तो उनके साथ घनिष्ठ सम्पर्क ही नहीं वरन् आशा जनक सहयोग भी प्राप्त किया जा सकता है । इस तथ्य की प्रामाणिकता में असंख्य उदाहरणों के साथ ब्रिटेन के राज्य परिवार का विश्वास भी एक कड़ी की तरह जुड़ा हुआ है ।

मनुष्य और प्रेतों की मध्यवर्ती श्रृंखला—

प्रेत तत्व का अन्वेषण करने वालों में से अधिकांश का कहना है कि शरीर छोड़ने के बाद प्रेतात्माएं आमतौर से अपने अदृश्य लोक में रहती हैं । उनकी अपनी दुनिया है । लम्बे जीवन में निरन्तर श्रम करने के कारण जीवात्मा की मौलिक शक्ति का एक बड़ा अंश चुक जाता है और वे उस थकान को मिटाने तथा नई स्फूर्ति प्राप्त करने के लिए विश्राम करती हैं ।

इसी अवधि में उन्हें अपने कृत्यों की प्रतिक्रिया का भला-बुरा अनुभव होता रहता है । पंच भौतिक शरीर छूट जाने पर भी सम्वेदन क्षमता वाला सूक्ष्म शरीर बना रहता है । उसमें मस्तिष्कीय विशेताऐं विद्यमान रहती हैं । जिस प्रकार चेतन और अचेतन मन की

विविध-विधि क्रिया-प्रक्रियाओं से जन साधारण को जागृत अवस्था में भले-बुरे अनुभव होते तथा निद्रा में स्वप्न दीखते रहते हैं उसी प्रकार मृतक को अपने अनुभवों और अभ्यासों की प्रतिक्रिया का अनुभव उस विश्रान्ति काल में होता रहता है। इसी को स्वर्ग-नरक कहते है।

सत्कर्म करने पर आत्म-सन्तोष और दुष्कर्म करने पर आत्म-ग्लानि का अनुभव होता है उसी प्रकार जीवन पर छाई विचारणाओं और क्रियाओं के फलस्वरूप चेतना पर जमे हुए संस्कार उस समय उभर कर आते हैं और जीव भले बुरे अनुभव करता है। ऐसे सपने नवजात शिशुओं को भी दीखते हैं अर्ध निद्रित स्थिति में कई बार हंसने-मुस्कराने और कई बार खिन्न होने, डरने और रोने जैसी मुखाकृति बनाते बदलते रहते हैं। यह उनकी संचित स्मृतियों की प्रतिक्रिया भर होती है। मृतक को प्रेत लोक में एक प्रकार के नव-जात शिशुओं की स्थिति में रहना पड़ता है। इस अवधि में अचेतन को अपनी संचित अनुभूतियों के प्रकटीकरण का अवसर मिलता है। घटनाक्रम न होने पर भी मनुष्य की निजी भावनाएं तथा मान्यताएं अवसर पाकर सम्वेदना बनाती और अपने स्तर का रूप बनाकर प्रकट होती हैं। भ्रान्तियाँ सनकें और मान्यताएं कई बार वास्तविकता मे भिन्न प्रकार के चिन्तन मस्तिष्क को इस तरह आच्छादित कर लेते हैं कि निजी मान्यताएं ही सत्य जैसी दिखाई पड़ने लगती हैं। स्वर्ग और नरक स्व निर्मित होते हैं। प्रेत लोक का वातावरण शान्त है, इतने पर भी हर प्रेतात्मा को उसकी निजी मानसिक स्थिति से उत्पन्न प्रतिक्रियाओं का अनुभव अपने-अपने ढङ्ग से करना पड़ता है। अधर्मी नरक का और धर्मात्मा स्वर्ग का अनुभव किस प्रकार करते हैं इसका विवरण दिव्य-दर्शियों ने कथा-पुराणों में विस्तार पूर्वक लिखा है।

विश्रान्ति और अनुभूतियों के मध्य गुजरने वाली परलोक की

अवधि में कई बार प्रेतात्माएं मनुष्यों के साथ सम्पर्क साधतीं और कई प्रकार की घटनाएं प्रस्तुत करती देखी जाती हैं। यह व्यतिक्रम अस्वाभाविक है। इस दुनिया से चले जाने के बाद दूसरी दुनिया की स्थिति में ही रहना योग्य है। नये जन्म में प्राणी पुराने जन्म की स्थिति, घटनाएं एवं सम्बन्ध भूल जाता है और नये सम्पक के अनुरूप अपने को ढालने लगता है। ऐसा ही परलोकवासी आत्माएं भी करती हैं। वे पुराने सम्बन्धियों को भूल जाती हैं और जिन परिस्थितियों में उन्हें जीवन काटना पड़ा, उससे भी अन्यमनस्क रहती हैं। विश्राम ऐसी ही मनःस्थिति में बन सकता है। अन्यथा पुराने सम्बन्ध एवं स्मरण ही बेचैनी का कारण बने रह सकते हैं और थकान को दूर करने की अपेक्षा नये किस्म का शोकजन्य उद्वेग खड़ा कर सकते हैं।

जीवितों और मृतकों के प्रत्यक्ष सम्बन्ध की जो घटनाएं घटित होती रहती हैं उनका कारण क्या है ? इस प्रश्न का उत्तर डा० मैस्यर ने अपनी निजी खोजों तथा अनुभूतियों के आधार पर दिया है। उनका कथन इस प्रकार है—'मृत्यु के समय मृतक की कोई अन्तिम उत्कट इच्छा रहती है तो उसकी आत्मा सूक्ष्म शरीर के माध्यम से उसे तृप्त करने का प्रयास करती है। इसके लिए उसके सूक्ष्म शरीर को किसी ऐसे जीवित शरीरधारी के साथ सम्पर्क साधना होता है जो इस आकांक्षा को पूर्ण कराने के लिए उपयुक्त सिद्ध हो सके।

प्रेतात्मा के सूक्ष्म शरीर का गठन किस प्रकार हुआ है। इस सन्दर्भ में उनका कथन है—'मानवी काया से एक प्रकार का विशिष्ट तत्व निरन्तर प्रवाहित होता रहता है। उसे 'एक्टोप्लाजम' कहते हैं। यह न केवल शरीर से निकलता है वरन् समस्त ब्रह्माण्ड उससे परिपूर्ण है। यह पदार्थ नितान्त सूक्ष्म और सर्वथा अदृश्य है तो भी उसकी प्रतिक्रियाओं के आधार पर उस अस्तित्व का प्रमाण परिचय प्राप्त किया जा सकता है।

यह कोई प्रकाश छाया नहीं है वरन् एक जीवनी शक्ति है। यह अपने प्रकटीकरण के लिए किसी सहयोगी को तलाश करती है और जिसमें अनुकूलता प्रतीत होती है उसे वाहन बनाकर अपनी इच्छित चेष्टाओं को चरितार्थ करती है। आत्माएं हर किसी से सम्पर्क नहीं साध सकतीं न किसी को डराने या वशवर्ती बनाने में सफल हो सकती हैं। सम्पर्क माध्यम का 'एक्टोप्लाज्म' उसी स्तर का होना चाहिए। जैसा कि मृतात्मा का है। सूक्ष्म शरीर का अस्तित्व भर है उसे भौतिक जीवन में कुछ कृत्य करने के लिए किसी अनुकूल सहयोगी की सहायता चाहिए। जो इस प्रयोजन के लिए जिस प्रेत को उपयुक्त लगता है। उसी के साथ सम्पर्क साधते हैं और इच्छित स्तर की हल-चलें खड़ी करते हैं।"

अब ये दोनों ही प्रतिपादन झीने पड़ते जाते हैं जिनमें अत्युक्ति भरा आग्रह था। प्रेत चाहे जिस पर चाहे जब हमला कर सकते हैं और मनुष्यों को जो भी कष्ट उठाने पड़ते हैं उनमें प्रेत ही मुख्य कारण होते हैं। यह मूढ़ मान्यता अब क्रमशः समाप्त हो चली है और भूतों के भय से अधिकांश लोगों ने मुक्ति पाली है। इसी प्रकार जो पदार्थ-वादी यह कह कहते थे कि चेतना और कुछ नहीं मात्र शरीरगत रासायनिक पदार्थों का सम्मिश्रण भर है उसके लिए मरण के उप-रान्त आत्मा नाम की कोई पृथक् वस्तु शेष नहीं रहती। इन दोनों ही पक्षों को मरणोत्तर जीवन सम्बन्धी नई खोजों ने आग्रह छोड़ने और पुनर्विचार करने के लिए बाध्य कर दिया है। सब कुछ भूतों की करतूत है मानने वाले दुराग्रही शिथिल पड़ रहे हैं और आत्मा का अस्तित्व ही न मानने वाले भी नये प्रतिपादनों और अकाट्य प्रमाणों को देखते हुए अपना हठ छोड़ने और वस्तुस्थिति को नये सिरे से समझने का प्रयत्न कर रहे हैं।

प्रेतात्माओं के अस्तित्व के होने न होने का विवाद अब प्रायः शिथिल या समाप्त होता जा रहा है। आये दिन उपलब्ध होते रहने

वाले प्रमाणों की विश्वासनीयता जो असंदिग्ध स्तर की होती है तो उसे भ्रम या मनगढ़न्त कहकर नहीं टाला जा सकता वरन् यह सोचना पड़ता है कि क्यों न वस्तुस्थिति पर पुनर्विचार किया जाय।

प्रेतों के अस्तित्व के सम्बन्ध में कुछ विश्वस्त घटनाक्रम इस प्रकार हैं—अमेरिकी चन्द्रयान अपोलो–११ जब अपनी विजय यात्रा पूरी कर चन्द्रतल से पत्थरों के नमूने लेकर वापस लौट रहा था। और पृथ्वी से लगभग २ लाख ८६ हजार कि० मीटर दूर था। उस समय ह्यूस्टन के कन्ट्रोल रूम में लगे तीव्र सम्वेदनशील टेप-रिकार्डरों पर अजीबो गरीब ध्वनियाँ टेप की गईं। ये ध्वनियाँ हजारों लाखों रेड इण्डियनों की रण दुन्दुभी के साथ की गई हुँकारें थी। जिसमें भयानक प्रेतों की ऐसी अट्टाहासें सम्मिलित थीं मानों वे अमेरिकी अभियान का मखौल उड़ा रही हों। अन्तरिक्ष यात्रियों नील आर्मस्ट्राँग, एरविन एल्ड्रिन व माइकेल कालिंस से इस विषय में पूछा गया तो उन्होंने यान में किसी प्रकार ध्वनि या यान्त्रिक गड़-बड़ी होने से साफ इन्कार किया। इसका कोई विज्ञान सम्मत समा-धान नहीं था। प्रेत सम्बन्धी ऐसे उदाहरणों की कोई कमी नहीं। भावुकों, डरपोकों या अन्धविश्वासियों की बात छोड़कर भी इस सन्दर्भ में इतनी प्रामाणिक सामग्री बच रहती है, जो उनके अस्तित्व पर विश्वास की गुन्जायश नहीं रहने देती।

अब प्रसङ्ग यह चलता है कि मनुष्यों और प्रेतों के बीच आदान-प्रदान का जो सिलसिला चलता रहता है उसके हानिकारक पक्ष से बचाव कैसे किया जा सकता है? और उनकी सहायता से जो लाभ मिल सकता है उसे किस प्रकार सम्भव बनाया जा सकता है। अनुसंधान से इस सन्दर्भ में कुछ सूत्र हाथ लगे हैं। इन्हें अधिक प्रामा-णिक बनाने के लिए जो प्रयास चल रहे हैं उनके सफल होने की आशा, स्थिति को देखते हुए दिन-दिन बढ़ती ही जा रही है।

प्रेतात्माओं का स्वरूप एवं स्वभाव समझने में हर्ज ही क्या है?

प्रचलित अन्धविश्वासों में एक 'भूतों की भयानकता' भी है। पिछड़े क्षेत्रों में पिछड़े समुदायों में तनिक भी असाधारण प्रतीत होने वाली घटना के साथ भूतों का भी सम्बन्ध जुड़ जाता है। चेचक, बुखार, खांसी, सिर दर्द, मासिक धर्म की गड़बड़ी, गर्भपात के बाद संक्रमण आदि कोई भी रोग क्यों न हो, उसके पीछे भूत नाचते दीखते हैं और सियाने दिवानों की झाड़ फूंक चल पड़ती है। बच्चों को दस्त लगना, पसली चलना, किसी को नजर लगने का कारण ठहराया जाता है। मानसिक दुर्बलता कई बार उग्रता के स्तर तक चली जाती है तो चित्र, विचित्र प्रकार के उन्मादी, लम्पट प्रकट होने लगते हैं, उसकी मानसिक चिकित्सा कराने के स्थान पर भूतों का आक्रमण ठहराया जाता है और मेंहदीपुर के बालाजीर से लेकर न जाने कहाँ-कहाँ पहुँचा जाता है।

यह भूतवाद मूर्खों और धूर्तों के संयोग से चला है। अन्यान्य अन्धविश्वासों की तरह उसकी परिणति भी हर दृष्टि से हानि उत्पन्न करने के रूप में ही होती है। काम चोर तबियत के स्त्री, बच्चे इन कल्पनाओं और प्रतिपादनों से भयभीत, स्व सम्मोहित होकर ऐसे आचरण करने लगते हैं मानों उन्हें सचमुच ही भूतों का सामना करना पड़ रहा हो। देवी का आवेश आने के नाम पर असंख्यों को भ्रमित

किया जाता है एवं लाखों की सम्पत्ति ऐसे धूर्त कमाते देखे जाते हैं। यह पिछड़ेपन की निशानी है। जो भारत के पिछड़े क्षेत्रों में इस बुद्धिवाद के युग में भी अपनी जड़ें गहराई तक जमाये बैठी है।

एक ओर जहाँ इस अन्धविश्वास और भ्रम जंजाल का उन्मूलन करने की आवश्यकता है वहाँ दूसरी ओर मरणोत्तर जीवन में पुन-र्जन्म से पूर्व की मध्यवर्ती स्थिति से आत्मा के स्वरूप एवं कार्यक्रम को खोजने, समझने की आवश्यकता है। जब शरीर धारियों की परिस्थिति और समस्याओं को समझने का प्रयत्न किया जाता है, तो उन अदृश्य मनुष्योत्तर प्राणियों की क्यों उपेक्षा की जाय जो कल, परसों हमारी ही तरह पूर्ण सक्षम और दृश्यमान थे। मरना सभी को है। अपनी बारी भी देर सवेर में आनी ही है। जिस क्षेत्र में प्रवेश करना अवश्यम्भावी है, उसका पूर्व परिचय प्राप्त करने से सुविधा ही रहेगी। फिर जो इन दिनों अदृश्य हैं उनमें से कई महत्वपूर्ण भी हैं। कई स्नेही सम्बन्धी भी हैं। कइयों में विलक्षण सामर्थ्य भी है। उनके साथ सहयोग एवं ताल-मेल का सूत्र बिठाया जा सके तो निश्चय ही अपनी शक्ति सामर्थ्य एवं कार्यक्षमता के विस्तार में भारी सुविधा होती है।

प्रेतात्माओं का अस्तित्व, लोक एवं कार्य विधान यदि समझा जा सके तो प्रतीत होगा कि अदृश्य होने पर भी दृश्यमान मनुष्यों में भी अपने सजातियों में भारी दिलचस्पी रखते हैं। इसलिए अपनी ओर से भी सम्बन्ध साधने का प्रयत्न करते हैं। यह प्रक्रिया अटपटी हो जाने के कारण लोग डरने लगते हैं और उस सूत्र को तोड़ने का प्रयत्न करते हैं जो वस्तुतः किसी अहित के लिए नहीं जुड़ रहा था, वरन् उससे कुछ न कुछ हित ही होने जा रहा था। उदारमना मित्र, परि-चितों, स्नेही, सहयोगियों की तरह अशरीरी आत्माएं हमारे जीवन

से रस लेने लगें सहयोगी आदान प्रदान से सन्तुष्ट रह सकें तो उपयोगी सहायता भी कर सकती हैं।

सहायता मिले या न मिले—प्रेतात्माओं के साथ दिलचस्पी रखने में इतना तो हो ही सकता है कि उनमें से जो विक्षुब्ध हैं उनका सन्तोष सम्मान कर सकें। छेड़खानी किये जाने पर, उत्पन्न होने वाले उनके रोष, आक्रोश से बच सकें। इस सन्दर्भ में प्रेत संसार से सम्बन्धित कुछ घटनाओं के आधार पर उपयोगी जानकारी मिलती है। इन्हें ध्यानपूर्वक समझने की पर्यवेक्षण दृष्टि तो बनाये ही रहना चाहिए।

परामनो विज्ञान की कसौटी पर प्रेत—

कभी-कभी जीवित व्यक्ति की गहरी सम्वेदनाएं भी प्रेतात्मा को उपस्थित होकर अपना परिचय देने को बाध्य करती हैं। ऐसी ही एक घटना अमेरिका की विधवा महिला 'श्रीमती एलिस वेल' के साथ घटित हुई जिसका प्रकाशन अमेरिका के अधिकांश प्रमुख पत्रों में हुआ था।

श्रीमती एलिस वेल शाम को थकी-मांदी बाजार से लौटीं। सामान को एक ओर पटक, बेलचा उठाकर अङ्गीठी में कोयला डालने का प्रयास करने लगी। बेलचा उठाते ही वे कांपने लगीं। बेलचा उन्होंने एक दिन पूर्व ही खरीदा था तथा बिल्कुल स्वच्छ एवं चमक दार था। यह देखकर आश्चर्य चकित रह गईं की उस पर 'राबर्ट कैनेडी' का चित्र उभर आया था यह चेहरा उनकी हत्या के समय का था जैसा हत्या के उपरान्त १९६८ में देखा गया। सिर पीछे की ओर झुका था, आँखें बन्द थीं तथा चेहरे पर खून के धब्बे स्पष्ट दिखायी दे रहे थे। चित्र को देख श्रीमती 'वेल' द्रवित हो उठीं। सहसा उन्हें यह अहसास हुआ कि 'कहीं यह भ्रम तो नहीं है।" उन्होंने बेलचे के ऊपर बने चित्र को हाथ से छूकर देखा, यह जानकर और भी भय

मिश्रित आश्चर्य हुआ कि भयानक शीत में रखा हुआ बेलचे का वह भाग जहाँ चित्र दृष्टि गोचर हो रहा था; गरम था और मुलायम भी।

बेलचे को उलटाकर दूसरी ओर देखा तो पाया कि वह वैसा ही ठण्डा एवं कठोर था जैसा कि उस मौसम में होना चाहिए।

श्रीमती 'बेल' अपनी आँखों पर विश्वास नहीं कर सकीं। कहीं यह दृष्टि भ्रम तो नहीं, ऐसा समझकर कि 'मैं' 'राबर्ट' की प्रशंसक रही हूँ तथा उनकी मृत्यु से हमें गहरा सदमा पहुँचा है, किसी ने मनोरंजन की दृष्टि से यह चित्र तो नहीं बना दिया है उन्होने बेलचे पर उभरे चित्र को हाथों से रगड़ा; किन्तु यह सोचना असत्य था। बेलचे पर रङ्ग-रोगन के प्रयोग का कोई चिन्ह नहीं था तथा उसमें 'ताप' अब भी उसी प्रकार बना था। श्रीमती 'बेल' ने सोचा यदि यह मेरी चेतना का भ्रम है तो यह सब दृश्य किसी अन्य को दिखायी नहीं देना चाहिए। तथ्य की परीक्षा के लिए बेलचे को मुलायम कपड़े में लपेटकर साथ लिए हुए अपने पड़ोसी 'बोलेन' दम्पत्ति के यहाँ पहुँची। उनके सामने 'बेलचे' को रखते हुए श्रीमती बेल ने पूछा "कि क्या उन्हें कुछ दिखायी दे रहा है। श्रीमती 'बोलेन' ने तेज स्वर में कहा 'यह तो राबर्ट कैनेडी हैं, जिनकी हत्या अमेरिका में कर दी गई थी। देख ! उनके चेहरे से अब भी रक्त टपकता मालूम हो रहा है।" बेलचे की गर्मी का आभास उनको भी ठीक वैसा ही हुआजैसा कि श्रीमती बेल को अब सन्देह की बिल्कुल ही गुञ्जाइश नहीं थी।

बेलचे पर उभरा हुआ चित्र किसी व्यक्ति द्वारा बनाया गया है अथवा अन्य कोई रहस्य मय कारण से बना है इस बात के परी-क्षण के लिए चित्रकला विशेषज्ञ को बुलाया गया। 'बेलचे' पर बने रङ्गीन चित्र पर तेजाब आदि डालकर परीक्षण किया गया। 'बेलचे' की धातु में छेद तो हो गया किन्तु चित्र ठीक वैसा ही बना रहा। विशेषज्ञ ने परीक्षण के उपरान्त घोषणा की कि "यह चित्र मानव

निर्मित नहीं है। इसके पीछे किसी दवीय शक्ति का हाथ है। इसका प्रमाण है--वेलचे का गरम होना।"

अगले दिन लोगों की भीड़ यह देखने के लिए उमड़ पड़ी। अनेकों व्यक्तियों ने वेलचे पर उभरे चित्र का फोटोग्राफ लेने का प्रयत्न किया। किन्तु यह देखकर निराशा हुई कि फिल्म पर कोई चित्र नहीं आया साथ ही वेलचे पर उभरा चित्र भी लुप्त हो गया। इस घटना का विस्तृत विवरण उत्तरी इंग्लैंड के (साउथ शोल्ड्स) से निकलने वाले पत्र "सण्डे-मिरर" में प्रकाशित हुआ।

प्रख्यात परामनोवैज्ञानी डा॰ टिमोरी वेलजोन्स ने 'वेलचे' में कैनेडी की प्रेतात्मा की उपस्थिति को स्वीकार करते हुए कहा कि कैनेडी की मृत्यु से श्रीमती वेल को मानसिक आघात लगा। उनकी सम्वेदनाओं ने सूक्ष्म आध्यात्मिक वातावरण में केन्द्रीभूत होकर इस बिम्ब की सृष्टि की, जो किसी भी वास्तविक चित्र से अधिक यथार्थ है वेलचे का गरम होना इस बात का प्रमाण है कि कैनेडी की प्रेतात्मा द्रवित होकर उक्त चित्र में उपस्थित है। उन्होंने कहा कि इस प्रकार की उष्णता एवं कोमलता से बना बिम्ब मानस पटल पर ही प्रति-बिम्बित होता है। 'कैमरे' का फिल्म इतना सम्वेदनशील नहीं होता कि उस पर इस प्रकार के बिम्ब आ सकें।

एक और घटना सन् १९६८ की है। रोजेनहीन (प॰ जर्मनी) के एक लब्ध प्रतिष्ठित वकील ने अपने अनुभव दर्ज करते हुए आश्चर्य जनक विवरण दिये हैं। उनके टेलीफोन की घण्टी बार-बार बजती वकील साहब चोंगा उठाकर कान से लगाते किन्तु दूसरी ओर से किसी के बोलने की आवाज न सुनाई देती। वे ऐसा करते-करते थक गये। झल्लाकर टेलीफोन के मोनीटर को इस शरारत की जाँच करने के लिए रिपोर्ट लिखा दी गई। किन्तु अब बिजली के बल्ब का नम्बर था

कभी तेज कभी धीमा। कभी ट्यूबलाइट जलती बुझती तथा एक-दो बार तेज रोशनी कर फूट भी गई। हारकर बिजली विभाग में रिपोर्ट लिखा दी गयी। सारे सर्किटों की छानबीन की गयी किन्तु कहीं गड़बड़ी न मिली। टेलीफोन विभाग ने भी उत्तर में यही कहा कि क्षमा करें! पूरी जाँच कर ली गयी है किन्तु हमें शरारत का कोई सुराग हाथ नहीं लगा है। इसके उपरान्त आठ या नौ महीने बाद यह सारी घटनाएँ ब्यौरे वार प्रो० हांस बेण्डर (अध्यक्ष 'फ्रो बर्ग इन्स्टीट्यूट आफ पैरा साइकोलॉजी') को बताई गयीं तो उन्होंने बारीकी से जाँच करके बताया कि यह मामला पदार्थ संचालन (साइको-काइनेसिस) का है। कुछ सूक्ष्म शक्तियाँ भी भौतिक पदार्थों पर नियन्त्रण कर सकने की क्षमता का आभास देती रहतीहै और यही वह अवस्था है जो भूत-प्रेत के रूप में परिचय देती रहती हैं।

प्रसिद्ध वैज्ञानिक हेनरी प्राइस ने अपनी पुस्तक 'फिफ्टी पिक्चर्स आफ साइकिक रिसर्च' में एक घटना का विवरण देते हुए लिखा है कि एक लड़की के पिता प्रथम विश्वयुद्ध में मारे जा चुके थे। सन् १९२१ ई० में उनकी लड़की रोसेली भी ६ वर्ष की अल्पायु में ही मृत्यु को प्राप्त हो गयी। मृत्यु के चार वर्ष बाद १९२५ ई० से ही वह अपनी माँ को स्वप्न में दिखायी देने लगी। बाद में प्रत्येक बुधवार को वह घर के सभी सदस्यों को भी दीखने लगी। इस घटना की सत्यता प्रामाणित करने के लिए वैज्ञानिकों व पत्रकारों के दल ने १५ दिसम्बर १९३७ को उसके घर वालों से सम्पर्क किया। प्रयोग के लिए कमरे की खिड़कियाँ दरवाजे बन्द कर लिए गये।

प्रयोग प्रारम्भ होते ही रोसेली की छाया धीरे-धीरे अपनी माँ के पास आयी। माँ ने पूछा—'रोसेली'। उसने उत्तर दिया—"हाँ"। तब पत्रकारों व वैज्ञानिकों ने उस लड़की को स्पर्श करने की स्वीकृति उसकी माँ से लेकर लड़की के गले, हाथ व सिर पर अपना हाथ फेरते

हुए उसकी नाड़ी देखी जो चल रही थी। कमरे में प्रकाश करने पर रोसेली के हाथ, पैर व चेहरा सभी साफ-साफ शुभ्र संगमरमर जैसे दिखाई दे रहे थे। शरीर बड़ा ही कोमल था। प्रयोग १५ मिनट तक चलता रहा और वह लड़की 'हाँ' और 'नहीं' में बराबर उत्तर देती रही। तदुपरान्त उसका शरीर छाया में रूपान्तरित हो अन्तर्ध्यान हो गया।

प्रेतात्माओं के अस्तित्व को नकारा नहीं जा सकता। उनका अस्तित्व होता है और अपनी गलतियों पर जीवित व्यक्तियों की ही तरह उन्हें पश्चाताप करते देखा गया है। 'फेट' पत्रिका के अगस्त १९६२ के अङ्क में प्रकाशित श्रीमती सेना सरंजेस्की का संस्मरण 'सिसकते भूत का सन्देह' इस तथ्य पर प्रकाश डालता है।

वे लिखती हैं—"मैं जिस मकान में रहती थी उसमें कभी-कभी सीढ़ियों पर और कमरों में किसी के टहलने की आवाज आया करती थी। एक दिन मुझे लगा कि पास ही कोई छाया खड़ी है। तभी मुझे टेड ऐलिसन नामक व्यक्ति का स्मरण हो आया जिसने कुछ समय पहले इसी मकान में आत्महत्या की थी। एलिसन के भूत की याद आते ही मुझे डर लगने लगा। किन्तु मैंने अपने को सम्हाला। साहस करके उससे पूछ ही लिया—आप टेड तो नहीं हैं ?' मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। मैंने स्पष्ट सुना—'यस'। मैंने पुनः पूछा—'आप कुछ कहना चाहते हैं ?' पर इससे पूर्व कि कोई उत्तर सुनूँ, वह छाया अदृश्य हो गयी और फिर कई दिन बाद आयी। मैंने फिर साहस बटोरकर पूछा—'आप सिसकते क्यों हैं, क्या आप कुछ कहना चाहते हैं ?' इस बार उसने बताया—'मैंने आत्महत्या नहीं की थी। किसी जहरीली औषधि के भूल से सेवन करनेपर यह दुर्घटना हुई। आप मेरी धर्मपत्नी को कहना कि मैं अपनी बच्चियों को बहुत प्यार करता हूँ।' इसके साथ ही वह छाया गायब हो गई और फिर कभी नहीं दिखाई

पड़ी। बाद में मैंने श्रीमती टेड से बातचीत की तो उन्होंने बताया कि निस्संदेह वे अपने साथ इन्सुलिन की शीशी रखते थे और उसी के द्वारा उनकी मृत्यु हुई थी।

इन घटनाओं से प्रतीत होता है कि दिवंगत आत्माएँ शरीर-धारी स्वजनों के साथ सम्बन्ध स्थापित करके अपना मन हल्का करना चाहती हैं अथवा किसी छोटे–मोटे सहयोग की अपेक्षा लेकर इर्द–गिर्द मंडराती हैं।

"इन्टर प्रिटेशन ऑफ ड्रीम्स" नामक पुस्तक में सुप्रसिद्ध मनोविज्ञानवेत्ता डा० सिगमंड फ्रायड एक घटना का वर्णन करते हुए लिखते हैं—

"मेरे शहर के एक संभ्रान्त व्यक्ति के पुत्र का देहावसान हो गया। रात में अन्त्येष्टि संभव नहीं थी, अतएव प्रातःकाल अन्त्येष्टि का निर्णय कर लाश के चारों ओर मोमबत्तियाँ जलाकर छोड़ दी गयीं। एक व्यक्ति पहरे पर नियुक्त कर मृतक का पिता अपने कमरे में जाकर सो रहा। थोड़ी ही देर बाद उसने एक स्वप्न देखा, उसका लड़का सामने खड़ा होकर कह रहा है—"बाबा! तुम यहाँ सो रहे हो और मैं जल रहा हूँ। मेरा शरीर यहीं जल जाने दोगे क्या?" स्वप्न देखते ही पिता की नींद खुल गई। खिड़की से झाँककर देखा तो जिस कमरे में बच्चे का शव रखा हुआ था, तेज प्रकाश दिखाई दिया। अज्ञात आशंका से पिता वहाँ दौड़कर गया तो देखा कि पहरे वाला व्यक्ति अलग हटकर सो रहा है और मोमबत्ती गिरने से कफन में आग लग चुकी है। थोड़ी देर और पहुँचना न होता तो लाश का क्या, घर का ही पता न चलता, जलकर खाक हो जाता।

प्रेत विद्या के बारे में सुप्रसिद्ध परामनोविज्ञानी और दार्शनिक डा० एम० जॉड ने बी० बी० सी० पर एक परिसम्वाद में भाग लेते

हुए कहा था—"मैं भूतों पर विश्वास नहीं करता था, एक दिन जब मेरे ऊपर प्रयोगशाला में बैठे-बैठे चारों ओर से साबुन की टिकिया बरसनी आरम्भ हो गयीं और खोज करने पर उसका कोई आधार नहीं सूझ पड़ा तो मेरा विश्वास बदल गया और मैं अब भूतों के अस्तित्व को मानता हूँ। साथ ही इनकी दुनियां के बारे में और विस्तार से जानने हेतु शोधरत भी हूँ।"

ब्रिटेन में प्रेत सम्बन्धी विज्ञान सम्मत प्रतिपादन हेतु जितने परामनोवैज्ञानिकों-वैज्ञानिकों ने अपने संस्थान बनाये अथवा विश्व विद्यालयों में इनकी फैकल्टी खुली, यह अपने आप में एक कीर्तिमान है। न्यूयार्क से प्रकाशित पत्रिका "बियॉण्ड रियलिटी" के अनुसार इस समय लगभग छह सौ से अधिक शोध प्रतिष्ठान पाश्चात्य जगत में अदृश्य जगत की इसी एक विधा के रहस्यों की खोज में लगे हैं।

कभी-कभी प्रेत उत्पात मचाते और व्यक्तियों को तंग करते देखे जाते हैं। यह कभी अकारण भी होता है, कभी ढूंढ़ने पर कारण भी मिल जाते हैं कुछ वर्षों पूर्व एक ऐसी ही घटना ब्राजील के इटा-पिका शहर में एक किसान परिवार में घटित हुयी। एक दिन अचानक सिडकाण्टो के घर में पत्थरों की बारिश होने लगी। परिवार वालों ने इसे आरम्भ में किसी की शरारत समझी, पर गहरी छानबीन के बाद भी जब स्रोत का पता नहीं चला और पत्थर लगातार बरसते ही रहे तो अन्ततः पुलिस को इसकी सूचना दी गयी। पुलिस आयी, मगर वह भी कुछ नहीं कर सकी। हर क्षेत्र के अनेक विशेषज्ञ इस घटना की परख करने आये, पर रहस्य पर से पर्दा कोई भी नहीं उठा सके, और अन्त तक यह रहस्य बना ही रहा।

एक घटना १९५६ की है। भूतपूर्व अमरीकी राष्ट्रपति जिमी कार्टर तब एक मामूली किसान थे। वे सपरिवार जार्जिया के ग्रामीण

परिसर में एक पुराने मकान में रहा करते थे। वह मकान पुराने ढंग का था और चारों ओर लम्बे वृक्ष लगे हुए थे। सुना जाता है कि उस मकान का निर्माण सौ वर्ष पहले १८५० में हुआ था। जिमी कार्टर सन् १९५६ से १९६० तक इस मकान में रहे। एक रात्रि उन्होंने मकान के एक कमरे में किसी की चीख सुनी। कौन चीखा था ? क्यों चीखा था ? यह जानने के लिए कार्टर और उनकी पत्नी ने घर का कोना-कोना छान मारा परन्तु कहीं कुछ नहीं मिला। बाद में सामान गायब होने की घटनायें भी घटीं। अतः घर उन्होंने छोड़ दिया। कुछ दिनों बाद उस मकान में और भी किरायेदार आये। एक दिन एक किरायेदार के कमरे से मध्यरात्रि में उसका बिस्तर ही गायब हो गया। वह तो सोया का सोया ही रहा किन्तु उसके नीचे का बिस्तर इस तरह गायब हो गया जैसे उसने बिस्तर बिछाया ही न हो। यह देखकर सब आश्चर्यचकित रह गये। यदि कोई चोर आया भी था तो वह बिस्तर कैसे ले गया ? और बिस्तर ही क्यों ले गया ? जबकि अन्य कीमती सामान छुये तक नहीं गये थे ? यह गुत्थी अन्त तक किसी भी तरह नहीं सुलझ सकी।

विश्वविख्यात 'लाइट' पत्रिका के सम्पादक जार्ज लेथम की अपने पत्र में एक लम्बी लेखमाला "मैं परलोकवादी क्यों हूँ ?" शीर्षक से कई अङ्कों में प्रकाशित हुयी है। उनका पुत्र जॉन फ्लैंडर्स के मोर्चे पर युद्ध में मारा गया था। तोप के गोले ने उसके शरीर के टुकड़े-टुकड़े उड़ा दिये थे, फिर भी उसकी आत्मा बनी रही और अपने पिता की आत्मा के साथ सम्पर्क बनाये रही। लेथम ने लिखा है—"मेरा पुत्र जॉन स्वर्गीय माना जाता है पर मेरे लिए वह अभी भी उसी प्रकार जीवित है जैसे वह किसी अन्य नगर में रहते हुए पत्र, फोन आदि के माध्यमों से सन्देशों का आदान-प्रदान करता हो!" उन्होंने अपनी मान्याओं को भावावेश अथवा भ्रम जैसा न समझ लिया

जाये, इसके लिए ऐसे प्रमाण प्रस्तुत किये हैं जिनके आधार पर सन्देह करने वालों को भी इस सन्दर्भ में प्रमाणिक जानकारियाँ प्राप्त करने और तथ्यों तक पहुँचने में सहायता मिल सके।

एक घटना अभी-अभी सन् १९७१ की ही है। प्रसिद्ध पुरात्वविद् और लेखक 'डा० रोज' दो कटी हुई खोपड़ियों का अध्ययन कर रहे थे जो पुराने खण्डहर की खुदाई करते समय मिली थीं। जब वे इन खोपड़ियों को लेकर अपनी प्रयोगशाला में लौट रहे थे तो उन्होंने रात्रि को करीब दो बजे अचानक ठण्ड बढ़ गई है, ऐसा अनुभव किया। उस समय डा० रोज सो रहे थे ठण्ड बढ़ जाने के कारण उनकी नींद खुल गई और उन्होंने अपने आसपास एक छाया मंडराती हुई देखी। उस छाया को उन्होंने बिस्तर से उठकर देखना चाहा तो वह बाहर निकल गई। डा० रोज ने उसका पीछा किया तो वह छाया कारीडोर को पार करती हुई बाहर निकल गई जब तक उनके पास वे कटी हुई खोपड़ियाँ रहीं, तब तक उन्होंने छाया को अपने आसपास मंडराते हुए देखा। जब उन्होंने खोपड़ियों का अच्छी तरह विश्लेषण कर लिया और उसे वापस विश्वविद्यालय के पुरातत्व संग्रहालय में पहुँचा दिया तब छाया का दिखायी देना स्वतः बन्द हो गया।

वस्तुतः अदृश्य जगत के अनेकानेक पहलू अभी भी वैज्ञानिकों की मशीनी परिधि के बाहर हैं चतुर्थ-पंचम आयाम की चर्चाएँ चला करती हैं लेकिन इन्हें किसी ने देखा नहीं। सूक्ष्म-अदृश्य जीवात्माएँ, जीवन्मुक्त आत्माएँ अपने क्रियमाण कृत्यों के आधार पर नयी योनि प्राप्त होने तक इसी में विचरण करती रहती हैं। यदाकदा वे अपने अस्तित्व का परिचय भी दे देती हैं। यह विधा जितनी विलक्षण-विचित्रताओं से भरी-पूरी है, उतनी ही अन्वेषण की विशाल सम्भावनाओं से भरी हुई भी।

भूत-प्रेतों के कहानी किस्से मूलतः अन्ध विश्वासियों द्वारा कहे सुने जाते रहे हैं, इसलिए वे अविश्वसनीय एवं किम्वदन्ती जैसे माने जाते हैं। किन्तु कई बार सुशिक्षित समझदारों एवं सम्भ्रान्त व्यक्तियों की साक्षी में ऐसी घटनाएँ सामने आती हैं तो इनकी यथार्थता पर अविश्वास करना कठिन हो जाता है।

अमेरिका के पश्चिमी छोर पर लास ऐंजेल्स महानगर में हॉलीवुड नामक सुप्रसिद्ध फिल्म नगरी है यहाँ कितनेही कलाकारों एवं संचालकों का बाहुल्य है। सभी सुशिक्षित एवं सुसम्पन्न वर्ग के हैं एवं कला की सुरुचिपूर्ण महत्ता के पक्षधर हैं। वे लोग झूठे किस्से कहानियां गढ़ेंगे, भ्रान्तियाँ फैलाएँगे ऐसा मानने को जी नहीं करता।

इस नगरी में कई मकान अभिशप्त माने जाते हैं एवं प्रेतों के उत्पात के कारण उनमें रहने को बहुसंख्य व्यक्ति सहमत नहीं होते। उनमें आए दिन ऐसी घटनाएँ होती रहती हैं जिन्हें प्रेतों की करतूत के अतिरिक्त और कुछ नहीं कहा जा सकता। इस अच्छे-खासे मोहल्ले में मकान ढेरों खाली पड़े हैं। जिस उपनगरी में स्थान प्राप्त करने के लिए लोग तरसते हैं, उसमें कुछ मकान मात्र इसी कारण लावारिस पड़े रहें कि उनमें प्रेतों का निवास है, सचमुच आश्चर्य की बात है।

इस नगरी में एक नृतत्वविज्ञानी रहते हैं। नाम है—रिचर्ड सीमेट। उन्होंने ऐसे अभिशप्त मकानों में घटित होने वाली असाधारण घटनाओं का स्वयं अन्वेषण किया है और साक्षी में ऐसे लोगों को लिया है जिन्हें अन्धविश्वासी या अप्रामाणिक नहीं कहा जा सकता। इन मकानों में यदा-कदा घटित होने वाले घटनाक्रमों की जानकारी इन लोगों के माध्यम से वैज्ञानिक जगत के समक्ष प्रस्तुत भी है और इस बात की जाँच-पड़ताल कराई है-कि कोई छल-कपट तो इसके

पीछे नहीं है। कई बार कौतूहल फैलाने के लिए भी कुछ व्यक्ति ऐसी अचम्भे वाली घटनाओं की चर्चा करने लगते हैं। किन्तु जब इनकी बारीकी से जाँच-पड़तालकी जाती है तो पोल खुल जाती है और कोई प्रपंच रचा गया होता है तो वह खुलकर सामने आ जाता है। इस सम्भावना के स्पष्टीकरण हेतु श्री सीमेट ने अपने साथ लॉसएंजेल्स के प्रामाणिक अखबारों के पत्रकार भी साथ लिए और हॉलीवुड के कई मकानों में समय-समय पर घटित होने वाली प्रेत लीलाओं की तर्क सम्मत जाँच पड़ताल आरम्भ की।

ऐसे मकानों में ६११ आक्सफोर्ड, १०००१ नार्थ ऑक्सफोर्ड ड्राइव, ११४३ सम्मिट ड्राइव, १००५० सीपली ड्राइव, १४३३ वेलाड्राइव व २० ईस्टर्न ड्राइव आदि कई हैं, जिनमें रात्रि के समय, प्रत्यक्ष कोई प्रतिमाएं न दीखते हुए भी उनके द्वारा किये जाने वाले कृत्यों का प्रत्यक्ष आभास मिलता है। हँसना, रोना, उछलना, कूदना धमाचौकड़ी, वस्तुओं का उठना-गिरना, सामान को बिखेरना-सिमेट देना—बटोर लेना जैसी घटनाएँ यह बताती हैं कि यहाँ अदृश्य मानवों की उपस्थिति काम कर रही है। वे या तो आपस में लड़ते-झगड़ते हैं, मद्यपान करते हैं अथवा गाली गलौज देते, अवांछनीय कृत्यों में निरत देखे जाते हैं। सभी कृत्य ऐसे हैं जिन्हें असभ्य, अनगढ़, बेतुके व्यक्ति शिष्टाचार का उल्लंघन करते देखे जाते हों। उनकी उपस्थिति एवं हरकत का परिचय इस आधार पर मिलता है कि वस्तुएं हिलती झुलती हैं, विचित्र आवाजें आती हैं, छतों या दीवारों पर धमाचौकड़ी होने से इमारतों में हलचल का आभास होता है। फर्नीचर तथा छोटी बड़ी वस्तुएं लड़खड़ातीं, इधर-उधर हटती, इकट्ठी होती हैं। यह सब मनुष्यों की उपस्थिति तथा हरकत किए बिना नहीं हो सकता। इतने पर भी आश्चर्य इस बात का है कि हरकतें करने वाले मनुष्यों की उपस्थिति का आभास मिलते हुए भी उनका दृश्य आकार

नहीं प्रत्यक्षीकृत होता एवं परोक्ष पर विश्वास न करने वालों को हतप्रभ कर देता है।

मात्र इन्हीं मकानों में ये उपद्रव किसलिए होते हैं, इसका इतिहास ढूंढ़ निकालने पर विदित हुआ है कि इन मकानों में प्रकारान्तर से भूतकाल में कभी न कभी हत्याएं आत्म-हत्याएं, मारधाड़, उपद्रव, चोरी, डकैती, बलात्कार, व्यभिचार जैसे दुष्कर्म होते रहे हैं। कुख्यात अपराधियों के ये अड्डे बने रहे हैं। सम्बन्धित व्यक्ति इन दुष्कर्मों के कारण पीड़ित होते रहे हैं। उन घटनाओं की पुनरावृत्ति करने अथवा बदला चुकाने, रिहर्सल करने जैसी कोई बातें रही होंगी, जिस कारण उस प्रकार की उठा-पटक का आभास मिलता है।

जो व्यक्ति इस उठा-पटक को देखने उन मकानों में जाते हैं, उन्हें डराने-भगाने के उद्देश्य से उपद्रवों की गतिविधियां तेज हो जाती हैं और जब दर्शक लोग वहां से चले जाते हैं, तो उठा-पटक धीमी पड़ जाती है और लगता है कि अब वे लोग निर्भय होकर शान्तिपूर्वक अपनी हरकतें कर रहे हैं।

जब-जब भी किन्हीं साहसी व्यक्तियों ने इन मकानों को स्थायी निवास हेतु लेने का प्रयत्न किया है, तब तब उपद्रव बढ़ गए हैं और ऐसा लगा है कि उन्हें अज्ञात उपद्रवियों द्वारा जिनकी धूमिल आकृति सामान्य मनुष्यों जैसी ही मिलती-जुलती हैं, उठाया-धकेला या खदेड़ा जा रहा है। ऐसे उपद्रवों के बीच किसी का ठहरना कठिन पड़ता है और जैसे-तैसे करके जान बचाते हुए भागते ही बनता है। इन परिस्थितियों में वे मकान मुद्दतों से खाली पड़े हैं। कुछ हिम्मत वालों ने चार-चार छै-छै की मण्डली बनाकर वहां पैर जमाने का प्रयास किया है, पर हर बार असफलता ही हाथ लगी है। फलतः सर्वत्र यह बदनामी हो चुकी है कि इन मकानों मे रहना खतरे से खाली नहीं है।

इन मकानों में होने वाली हरकतों और सम्बधित पूर्व घटनाओं की खोज करने हेतु इतिहास विशेषज्ञ, नृतत्व विज्ञानी प्रो० रिचर्ड सीमेट बड़ी दिलचस्पी के साथ इन्हीं मकानों के इर्द-गिर्द डेरा डाले रहते हैं। जिन्हें भूत प्रेतों की लीलाओं को देखने की दिलचपी होती है, उन्हें इनमें से किसी मकान की चाबी मालिकों से प्राप्त कर जितनी देर हरकतें देखने की इच्छा हो, दिखाकर वापस लौटा देते हैं। प्रवेश करने वाले हिम्मत वाले रहे हैं तो बिना घबराए सब कुछ देख-सुनकर लौट आए हैं। डर के मारे परेशानी होती है, वह बात दूसरी है पर धक्का-मुक्की–मार-पीट जैसी हानि किसी को नहीं उठानी पड़ी।

एक बार उनके साथ एक पत्रकार एक प्रेत ग्रस्त मकान में गए और उन्होंने जो कुछ वहाँ देखा, उसे थोड़ी देर के अनुभव को अपने अखबार में छापा भी। पढ़ने वालों के अनेकों पत्र रिचर्ड के पास आए जिनमें से अधिकांश प्रत्यक्षत: इस प्रेत लीला को देखना चाहते थे एवं परोक्ष जगत मरणोत्तर जीवन पर विश्वास रखते थे। प्रो० रिचर्ड सीमेट के लिये तो विद्या शोध का विषय है। दिलचस्पी रखने वालों को वे अपने अनुभव सुनाते हैं तथा प्रेतों के क्रिया-कलापों के माध्यम से अपने वर्त्तमान जीवन को सुधारने की शिक्षा भी देते हैं। प्रेतों से सम्पर्क साधना उनकी हॉबी के रूप में विकसित हो गया है।

अमेरिका की तुलना में इंग्लैण्ड में प्रेतों पर विश्वास रखने वालों की संख्या अधिक है। राजघराने के समस्त पुराने किले (कैसल्स) वहाँ अभिशप्त बताये जाते हैं। ८ वीं से लेकर १८ वीं शताब्दी तक बने ऐसे अनेकों किले हैं जिनमें प्रेत लीला का ताण्डव नृत्य देखा–अनुभव किया गया है। ऐसा ही चिलहम नामक १२ वीं शताब्दी का बना एक किला उ० इंग्लैण्ड में है जहाँ अक्सर फिल्मों

की शूटिंग हुआ करती है। रात्रि में इसी कारण सामान्यतया वहाँ कोई नहीं ठहरता।

हमारे देशमें भी किसी न किसी घरके भुतहा होनेकी कईघट-नाएं प्रकाश में आती रहती हैं। कोई आवश्यक नहीं कि भुतहे ठह-राये गए सभी मकानों में वास्तव में भूतों का डेरा हो। किन्तु जांच पड़ताल पर पता चलता है कि उनमें से कुछ तो अफवाह के शिकार बना दिये गए हैं कुछ में किसी का स्वार्थ छिपा होता है किन्तु कुछमें निश्चत ही उसमें पहले रह रहे व्यक्तियों का आत्यन्तिक लगाव ही कारण निकलता है।

अब से कोई ४०–४५ वर्ष पूर्व की बात है। कानपुर के बिर-हना रोड, नयागंजइलाका स्थित एक मकान के सम्बन्धमें विख्यात था कि वह भुतहा है। उस मकान में नये-नये आकर रहने लगे हल-वाई ने मकान को नया रूप देने के विचार से तुड़वाया और पहले की अपेक्षा अधिक स्थान घेर कर नया मकान बनवाया। जैसे ही नये बने मकान में उस परिवार ने रहना आरम्भ किया, वैसे ही परिवार का मुखिया प्रेत पीड़ितों की-सी हरकतें करने लगा। कई डॉक्टर आए, रोगी को देखा परखा, दवा दारु की किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। अन्त में एक तान्त्रिक की शरण ली गई तो प्रेतात्मा ने प्रत्यक्ष होकर कहा कि यह मेरा मकान है। मेंने इस व्यक्ति के साथ हमदर्दी बरती और उसे फटेहाल स्थिति से उबारा किन्तु इसने मेरे साथ ही धोखा दिया। मैं इस मकान में पचासों साल से रहता हूँ। यह मकान मेरा हैं और मैं किसी को तङ्ग नहीं करता। इसने मेरी अवज्ञा और उपेक्षा की इसीलिए इसे किये का दण्ड मिल रहा है।'

बिजनौर जिले के धामपुर परगने में एक गाँव है बसन्तपुर मरावली। यहाँ के निवासी रातमें अक्सर गाँव के बाहर एक प्रेतात्मा

को देखते हैं जिसके सम्बन्ध में कहा जाता है कि वह आज भी अपनी प्रेयसी की तलाश में भटक रहा है। मूल घटना ४० वर्ष पूर्वकी बताई जाती है। उस समय यहाँ एक ठाकुर कुंवरसिंह नामक जमींदार रहता था, उसके तीन बेटे, और एक बेटी थी। लड़की गाँव के ही एक युवक हरीसिंह की ओर आकर्षित हो गई और उसके प्रेम पाश में बँध गई। हरीसिंह अपने परिवार में अकेला था माँ बचपन में ही गुजर गई थी और बाप-बेटे को पाल-पोसकर इस दुनिया से चलता बना था।

हरीसिंह और ठाकुर की बेटी चोरी छिपे मिलने लगे। आखिर यह चोरी छिपे का खेल कब तक चलता। एक दिन पता चल ही गया और ठाकुर ने अपने दोनों बेटों की सहायता से तालाब के किनारे एकान्त पाकर उसकी हत्या कर दी। ठाकुर की लड़की को जब यह पता चला तो वह पागल-सी हो गई और विक्षिप्तों की तरह रहने लगी ठाकुर ने बहुत इलाज कराया परन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। अन्त में उसने अपनी सारी जमीन जायदाद बेच दी और गाँव छोड़कर किसी दूसरे स्थान पर चला गया। इस घटना के साक्षी व्यक्ति आज भी जिन्दा हैं और उनमें से जिन लोगों ने वह प्रेतात्मा देखी है, उनका कहना है कि, उसकी आकृति हरीसिंह से हूबहू मिलती-जुलती है।

वास्तविकता यही है कि यह एक कटु सत्य है। मृत्यु केवल स्थूल शरीर को ही नष्ट कर पाती है, सूक्ष्म शरीर का अस्तित्व फिर भी बना रहता है। मृत्यु के बाद जन्म लेने तक की अवधि विश्राम के लिए है किन्तु जो व्यक्ति किन्हीं पदार्थों, स्थानों या व्यक्तियोंमें आसक्त रहते हैं उन्हें मरने के बाद भी चैन नहीं मिलता। ठीक उसी प्रकार जैसे अति लोभी, लालची, लिप्सावान या चिंतित, दुःखी, व्यग्र, उद्विग्न व्यक्ति को रात में ठीक से नींद नहीं आती। वह रात में भी करवटें बदलता जागता रहता है। अनिद्रा का यह रोग मानसिक

सन्तुलनन को पूरी तरह डगमगा देता है। बहुत दिनों तक ठीक से न सो पाने के कारण जिस प्रकार लोग कई मनोव्याधियों के शिकार हो जाते हैं और उन्मत्तों जैसी हरकतें करने लगते हैं उसी प्रकार अतृप्त वासना लेकर मरने वाले व्यक्ति मरण काल के बाद निश्चित विश्राम की अवधि भी चैन से नहीं बिता पाते। उन्हें पागल प्रेतों की-सी स्थिति में देखा जा सकता है, जो खुद भी चैन से नहीं रहते तथा औरों को भी चैन से नहीं रहने देते।

जहाँ जहाज जिसे आखिर गिरना ही पड़ा—

१६ सितम्बर १९७८ की बात है। उस घर में पति-पत्नी दो ही थे। दोनों ने अनुभव किया कि उनके मकान की सीढ़ियों पर कोई ऊपर चढ़ता आ रहा है। चढ़ना थके हुए आदमी जैसा था। रुकना हुआ तो रोनेकी आवाजआने लगी। पति का नाम था एडवर्ड पत्नी का सूसन। पहले तो वे नवागन्तुक की टोह लेते रहे। फिर हिम्मत बांध-कर उसका परिचय और आनेका कारण पूछते रहे। पर जो कुछ जानकारी मिली वह असंगत और भयावह थी। रात को वे उस घर में ही इधर-उधर टकराते रहे और सबेरा होते-होते पागल जैसी स्थिति में पहुँच गये। दरवाजा खुला था। परिचितों ने उन्हें अलबर्टो सिविल अस्पताल पहुँचाया। वहाँ वे प्रलाप तो करते रहे पर किसी चिकित्सा से अच्छे न हुए। दूसरे दिन उनकी मृत्यु हो गई।

जिस मकान की चर्चा की जा रही है। उसका नाम था 'दि सिलवर ओक,' वह अतीव सुन्दर था, इसलिए जिनको भी मकान की आवश्यकता होती, इतना सुन्दर और सस्ता मकान देखकर वे ललचा जाते और बिना बहुत ढूंढ़-खोज किये उसे खरीद लेते। सब पर न्यूनाधिक एक जैसी मुसीबत बनती और सभी को जान से हाथ धोना पड़ता। यह मकान अपने जीवन काल में ५२ व्यक्तियों को निगल चुका था। अलबर्ट दम्पत्ति ५३ वें थे।

यह इमारत सन् १८८० में बनी थी। शिकागो की इस बिस्कुटी रंग से रंगी इमारत का डिजाइन किसी ने बड़े कलात्मक ढङ्ग से बनाया था और लागत का ख्याल किये बिना जी खोलकर उसमें पैसा लगाया था। ईंट सीमेंट ही नहीं उसमें चाकलेटी पत्थर भी बहुत लगा था। इसे उस समय के माने हुए नक्षत्र विद्या विशेषज्ञ अलेक्जेन्डर बेयरिंग ने बड़ी तबीयत से बनवाया। नक्शानवीस, कारीगर, रंगसाज उन्होंने ढूंढ़-ढूंढ़कर इसमें लगाये थे। उसे सर्वांग सुन्दर बनानेमें पैसा पानी की तरह बहाया था। लेकिन वे ज्यादा दिन इस कोठी में रह नहीं पाये। अक्टूबर १८८७ को वे अपने इस घर में मरे हुए पाये गये आधी रात उनके नौकरों ने सुना कि अपने शयनकक्ष में भीतर ही भीतर वे कुछ बुदबुदा रहे हैं। आवाज दी पर कोई जबाब न मिला। इस पर वे उनके परिचितों को बुलाकर लाये। दरवाजा खटखटाने पर कोई जबाब न मिला तो किवाड़ें तोड़ी गईं और मालूम पड़ा कि वे मरे पड़े थे।

उसके मरने के कई वर्ष बाद तक मकान बन्द पड़ा रहा। मौत की घटना लोग भूल गये। ऐसे अच्छे-खासे और बिल्कुल नये मकान को देखकर ग्राहकों के आने का सिलसिला शुरू हुआ। इसे सन् १८६७ में एक धनी युवती मेथिल्डी ने बड़े चाव से खरीद लिया। उन्हें अपने नांना की अपार सम्पत्ति उत्तराधिकार में मिली थी। ऐसे ही शौक-मौज में दिन गुजारती थीं। एकान्त उन्हें पसन्द था सो मकान को उन्होंने अपने अनुरूप पाया और सस्ते मोल मिलते देखकर सहज ही उनने खरीद लिया। उसके नाना कान्क्मिन सोने की खदानोंके व्यापारी थे सो विरासत में अपनी इस इकलौती धेवती के लिए अकूत सम्पत्ति छोड़कर मरे थे। मेथिल्डी के साथ उसका प्रेमी बेलिन्यूब भी रहने लगा। वे लोग शादी करना चाहते थे, पर इसके लिए उन्हें जल्दी न थी।

सफाई करते समय सिलवर ओक में एक कुंआ मिला। उसमें

एक नर कंकाल जंग लगी बन्दूक और कुछ ऐसे निशान मिले जो उसका समय अमेरिका के गृह युद्ध के दिनों का बताते थे। मालिकों ने इसका पता लगाने के बजाय इसको बन्द करा देना ज्यादा अच्छा समझा। उसने कुंए के निशान पूरी तरह मिटा दिए।

बेलिन्यूव भी सोने की खदानों का कारोबार करता था। कुछ सौदे निपटाने के लिए उसे एक सप्ताह बाहर रहना पड़ा। लौटा तो उसकी प्रेमिका उत्सुकता से उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। वह घर की देहली में घुसा ही था कि उन्मादियों जैसी हरकतें करने लगा। उसने कमर में से छुरा निकाला और प्रेमिका के सीने में भोंक दिया। वह मरणासन्न स्थिति में जमीन पर गिर ही पाई थी कि छुरे का दूसरा वार उसने अपनी छाती में किया और आत्महत्या करके अपना भी अन्त कर लिया।

घटना आई गई हो गई। लोगों ने इसे साधारण प्रेम विग्रह समझा। मकान की मालिकीयत अब प्रख्यात 'शिकागो ट्रिब्यून' पत्र के सम्पादक जान सिमिल्टन के हाथों आ गई। यह सन् १९०९में हुई। सिमिल्टन अनीश्वरवादी थे, भूत-प्रेतों की बातों पर जरा भी विश्वास नहीं करते थे। ११ जनवरी १९१० को उनके यहां एक पारिवारिक उत्सव था। किसी बच्चे का जन्म दिन मनाया जा रहा था। कुल मिलाकर छोटे-बड़े ३८ मेहमान एकत्रित थे। प्रीतिभोज हुआ। भोज के बाद दरवाजा तो खुला था पर मालूम पड़ा कि ३८ व्यक्ति मरे हुए पड़े हैं। कारण तलाश करने पर इतना ही कहा जा सका कि जहरीला खाना खाने से यह मौतें हुईं।

इसके बाद सन् १९१५ में यह मकान सैक्युअल ओचो नामक व्यक्ति ने खरीदा। वह शोधकर्मी था साथ ही दिलेर भी। इन दिनों मिस्र के पिरामिडों सम्बन्धी कुछ दस्तावेजों की खोज कर रहा था उसे कई रातों से बरामदों में कुछ परछाइयां टहलती और चीख

पुकार करती सुनाई पड़ीं। यह सब उसने देखा सुना तो सही पर घब-राया नहीं। दूसरे दिन अपने जैसे कुछ और दिलेर मित्रों को बुलाकर लाया कि माजरा क्या है ? कई दिन यह डरावनी बातें देखकर उसने निश्चय किया कि वह यह मकान छोड़ देगा। रात को ही उसने अपनी डायरी में लिखा—'दो डरावनी आँखें मुझे हर समय घूरती रहती हैं। इस मकान में रहते हुए खतरा है। मकान छोड़ देने का मेरा पक्का इरादा है।'

सन् १८२० में एक सौदागर थामसन ग्रेयरी ने यह इमारत खरीदी। उस परिवार को रहते एक सप्ताह भी न बीतने पाया था कि चमड़े की बेल्ट से किसी ने उन सबका गला घोंट दिया।

सन् १८२२ में यह मकान दो विधवा महिलाओं ने मिलकर खरीदा। इनमें से एक का नाम था एलिजाबेथ दूसरी का जैकसिन। वे जिस दिन से इस मकान में आईं उसी दिन से जीने में किन्हीं के चढ़ने-उतरने की, हँसने-रोने की आवाजें सुनने लगीं। पूछने पर कोई जवाब न मिलता। वे दस दिन में ही सूखकर काँटा हो गईं। उस बस्ती के नगरपालिका अध्यक्ष श्री अलबर्टो शिष्टाचार के नाते इन नये निवासियों की कुशल क्षेम पूछने आये तो उनसे कहा गया कि आरम्भ के दिन से ही कोई दुष्टात्मा उन्हें बुरी तरह डरा रही है और जान से मार देने की धमकी दे रही है।

अध्यक्ष ने अधिक विवरण पूछा तो उनने बताने से इनकार कर दिया और कहा—'हमें कहा गया है कि कुछ भी बताने पर उनकी जान ले ली जाएगी।'

बातें करते-करते कुछ देर हो गई। काल्विन विदाई लेते हुए बाहर खड़ी अपनी गाड़ी तक आये तो लगा कि उन्हें किसी ने जकड़ लिया है। वे हाथ फड़फड़ाकर उस जकड़न से छूटने की कोशिश करने लगे पर उलटे किसी जाल में कसते जाने का अनुभव करने लगे। फिर

वे बेहोश हो गये। होश आया तो उनकी स्थिति पागलों जैसी हो चुकी थी। उन्हें अस्पताल में भर्ती किया गया, तो वे इतना ही कह सके-"मैंने उन्हें देखा है-मैंने उन्हें देखा है।" जिस रात वे अस्पताल थे उसी रात उन दोनों विधवाओं की घर में ही मृत्यु हो गई। दोनों लाशें रेशमी रस्सी से बँधी छत पर लटक रहीं थीं। तबसे पचपन वर्ष तक अर्थात् सन् १९७९ तक वह मकान खाली ही पड़ा रहा। किसी की हिम्मत इसे लेने की नहीं हुई।

सबसे आखिरी किरायेदार थे एडवर्ड और सूसन। उनका भी अन्त ऐसी ही दुर्दशा में हुआ था। इस तरह कुल मिलाकर १२ मृत्युएँ इस अवधि में हो चुकी थीं। शिकागो प्रशासन ने इस मकान को अभिशप्त घोषित कर दिया और सन् १९८० में उसे जमींदोज करा दिया। यों अब वह मकान नहीं है तो भी भुतही आवाजें अब-तब उधर से गुजरने वालों को सुनने को मिलती हैं इस अभिशप्त मकान का रहस्य यथावत् बना हुआ है अमेरिका जैसे विकसित राष्ट्र में ऐसी बातें उप-हासास्पद मानी जाती रही हैं। किन्तु वैज्ञानिक स्वयं हतप्रभ हैं कि यह वस्तुतः है क्या ?

जिस प्रकार अच्छे प्रभाव से वस्तुएं अनुप्राणित होती हैं, उसी प्रकार बुरे लोगों के बुरे कृत्यों के सम्पर्क वाली वस्तुएं भी उस माहौल से प्रभावित होती हैं और उपयोग करने वालों का अहित करती हैं। कई मृतात्माओं की भी ऐसी ही मनोभूमि होती है कि वे अपनी उद्विग्नता—कुण्ठा जिस वस्तु पर उडेल देती हैं वह अभिशप्त बनकर जहाँ भी जाती है सङ्कट पैदा करती है। उनका जो भी उप-योग करता है दुःख पाता है। ऐसा विवरण एक अभिशप्त मकान के बारे में उपलब्ध है।

घटना स्पेन के बिलमेज नगर की है। उस मकान में एक बुढ़िया अपने परिवार सहित रहती और सामान्य गृहस्थी जैसा जीवन गुजारती थी।

सन् १६७१ का अगस्त का महीना था। दोपहर का भोजन बनाकर वृद्धा उठ रही थी कि उसे सामने के दीवार पर आकृति दिखाई पड़ी। भित्ति चित्र जैसी, देखने में वह कुरूप और डरावनी थी। यह अचानक किसने बनायी? क्योंकर बन गई? इस असमंजस में देर तक रहने की अपेक्षा वृद्धा ने यही उपयुक्त समझा कि उसे गीले कपड़े से पोंछकर साफ कर दिया जाय। उसने वैसा ही किया। पर यह क्या, चित्र और भी अधिक साफ हो गया, मानों किसी ने धुंधले शीशे को साफ करके दृश्य और भी अधिक स्पष्ट कर दिया हो।

तस्वीर को मिटाने के कई प्रयत्न किये गये, पर सफलता न मिली। निदान के लिए वृद्धा ने मकान मालकिन को सूचना दी। उसने भी इस आश्चर्य को देखा और मिटाने प्रयत्न सफल न होते देख कर दीवार का पलस्तर उखाड़कर इसे नये सिरे से करा देने की व्यवस्था की। वैसा हो भी गया। पर यह क्या? तस्वीर और भी दूने आकार की बन गई। न केवल आकार बढ़ा वरन् डरावनापन भी उभरने लगा। लगता था तस्वीर रो रही है और पीड़ा से आक्रान्त होकर छटपटाती भी है। मकान मालकिन भी इस अद्भुत प्रसङ्ग से उद्विग्न थी। उसने इन अङ्कनों को मिटाने के और भी उपाय किये पर सफल न हुई। एक के स्थान पर कई आकृतियाँ उभरने लगीं। उनमें से कुछ पुरुषों की थी, कुछ महिलाओं की।

वृद्धा ने डरकर घर खाली कर दिया और वह अन्यत्र चली गई। मालकिन को डर था कि कहीं उसका घर भुतहा होकर बदनाम न हो जाय—यह बला कहीं उसके परिवार को तङ्ग न करने लगे।

चर्चा फैली। निकटवर्ती शहर कार्डोवा तक समाचार पहुँचा। कौतूहल वश अनेकों दर्शक आने लगे। पत्रकारों की मण्डली आई। वे भी स्तब्ध थे। आकृतियां हिलने-डुलने तक लगी थी अपनी दुःखी

स्थिति का परिचय देने वाले मनोभाव प्रकट कर रही थीं। पत्रकारों ने वैज्ञानिकों, विशेषज्ञों और अधिकारियों तक खबर पहुँचाई, तो वे सब इस चीज की वास्तविकता परखने के लिए दौड़ पड़े। जो सम्भव था, सो जाँचा और जाना गया पर कुछ हाथ न लगा।

दीवारों पर अङ्कित होने वाली तस्वीरों का हिलना डुलना देख कर विशेषज्ञों ने ऐसे यन्त्र लगाये जिनसे वे कुछ वार्ता भी करती हों तो उसका आभास मिल सके। खुले कानों से तो वैसा कुछ सुनाई पड़ता नहीं था। यन्त्र रात्रि भर रखे रहे। सवेरे उन्हें ध्वनि बढ़ाकर सुना गया तो रोने, चीत्कार करने, गिड़गिड़ाने जैसी ध्वनियाँ थीं। वे कुछ कहते भी थे पर जो कह रहे थे वह समझा नहीं जा सका।

निदान यह सोचा गया कि पलस्तर उखाड़ने से परिवर्त्तन नहीं होता तो फर्श उखाड़कर देखा जाय, शायद उसके नीचे कोई कारण छिपा हो। खोदने पर एक दर्जन नर मुण्ड मिले। उनकी अवधि मध्ययुग के सामन्त काल की थी। अनुमान लगाया गया कि किन्हीं बर्बरों ने कोई नृशंस हत्याकाण्ड करके उनकी लाशें इस स्थान पर गाड़दी होंगी। मुण्ड वहाँ से बीन कर अन्यत्र पहुँचाये गये। उन्हें विधिवत् दफनाया गया, इसके बाद दीवारों पर आकृतियाँ बननी बन्द हो गईं।

मरणोत्तर जीवन पर विश्वास रखने वालों के लिये तो ऐसे लीला प्रसङ्ग अविश्वसनीय नहीं लगते विज्ञान जगत के लिये ये चुनौती अवश्य बन जाते हैं वस्तुत: अभी इस आयाम की जानकारी वैज्ञानिकों को नहीं हो पायी है, जिसमें ऐसी प्रेत लीलाएं घटती रहती हैं।

प्रेतबाधा, मनोविकार और मरणोत्तर जीवन

भूत बाधा के नाम से प्रचलित एक प्रकार के आवेश का लक्षण एवं प्रभाव ऐसा होता है जिसे देखते हुए उसे बहानेबाजी या सनक भी नहीं कहा जा सकता। उसके प्रभाव प्रत्यक्ष दीखते हैं। उन कारणों से रोगी का जीवन-क्रम ही अस्त-व्यस्त नहीं हो जाता कई बार तो जान पर बन आती है और बुरी तरह बर्बादी उठानी पड़ती है। ऐसी दशा में उसे झुठलाया कैसे जाय। कोई क्यों ऐसी बहानेबाजी करेगा, जिससे उसे कष्ट सहना और बहुत कुछ गंवाना पड़े। दूसरों का ध्यान आकर्षित करने—सहानुभूति पाने के लिए कई प्रकार के विचित्र-विचित्र आचरण तो करते और मन गढन्त करतूतें भी दिखाते हैं। इसमें प्रेत बाधा का खेल भी शामिल हो सकता है। पर हर परिस्थिति में यह बात सही नहीं प्रतीत होती। कई बार कई लोग इस संकट में बुरी तरह फँसे पाये जाते हैं।

फिर ऐसे उपद्रव या आक्रमण प्रेत ही करते हों, आवेश या उन्माद खड़े करते हों, यह बात प्रेत विज्ञान से प्राप्त जानकारियों से सर्वथा भिन्न है। मृतात्माओं का अस्तित्व होना—उनका व्यक्ति विशेष के साथ सम्बन्ध जुड़ना एक बात है। उन्माद या आवेश आना—आवेश-ग्रस्त या असाध्य रोगी की तरह विपत्ति में फँस जाना सर्वथा दूसरी। फिर यदि प्रेत आवेश सचमुच ही होता है तो फिर वह पिछड़े लोगों

या क्षेत्रों में ही क्यों पाया जाता है। समझदार लोगों में वैसा कुछ क्यों नहीं होता ?

यह प्रश्न ऐसे हैं जो अपना निश्चित समाधान माँगते हैं। इस सन्दर्भ में विज्ञजनों ने लम्बी खोजों के बाद इस स्थिति को अचेतन मन की विकृति कहा है। ऐसी या इससे मिलती-जुलती विकृतियाँ संसार भर में देखी गयी हैं जिन्हें कोई चाहे तो प्रेत बाधा भी कह सकता है।

शारीरिक रोगों की बढ़ोत्तरी के इस युग में मानसिक रोगों की भी चित्र-विचित्र किस्में निकली हैं। उन्माद आमतौर से उसे कहा जाता है जिसमें व्यक्ति सामान्य लोक व्यवहार और चिन्तन की मर्यादाओं का व्यतिक्रम करके कुछ भी सोचने और कुछ भी करने लगे। ऐसे लोग कई बार निष्क्रिय हो बैठते हैं, कई बार आक्रमण का रुख अपनाते हैं। कुछ घर छोड़कर कहीं भी चले जाते हैं और कुछ भी करते हुए जिधर-तिधर भटकते हैं। किन्तु अब नये किस्म के उन्मादों में ऐसी धारणायें भी जुड़ी हैं जिनमें व्यक्ति सामान्यतया लोक व्यवहार निभाता है पर कभी-कभी कोई आवेश चढ़ता है और नशेबाजों की तरह अपनी पूर्व धारणा की अभिव्यक्ति करने लगता है। इन्हें एक विशेष प्रकार की सनकें कहा जा सकता है जो यदाकदा उभरती हैं और कुछ ऐसी भी होती हैं जो स्वभाव में अपने लिए स्थान बना लेती हैं।

उत्तरी ध्रुव पर निवास करने वाले एस्किमो लोगों में कभी-कभी किसी-किसी पर एक भयानक मानसिक रोग चढ़ दौड़ता है। इसमें वह आपे से बाहर हो जाता है और ऐसा लगता है कि कोई उससे यह सब बलपूर्वक करा रहा है।

आँखें लाल हो जाती हैं, मांसपेशियाँ अकड़ जाती हैं, पसीना छूटता है। आवेशग्रस्त मनःस्थिति में पत्नी तक रेंडियर हिरनी जैसी दीखती है और उस पर आक्रमण कर बैठने पर उतारू दीखता है।

मुँह से लार टपकती है। भूख से तड़फड़ाता है और जो भी हाथ पड़े, खाने लगता है। स्थिति पूर्णतया उन्मादी जैसी होती है।

यह उस क्षेत्र का प्रख्यात रोग है। इसे उस क्षेत्र में काम करने वाले डाक्टरों ने 'विन्ड्रिगो' नाम दिया है। वहाँ के निवासी इसे 'हिम दानव' का आक्रमण कहते हैं। विश्वास करते हैं कि यह उस क्षेत्र के अधिष्ठाता महादैत्य का आक्रमण है। जो भूखा होने पर किसी को भी क्षुधा निवृत्ति के लिए चुन सकता है। जिसे पकड़ता है उसे फिर जीवित नहीं छोड़ता।

उन्माद जब अति स्तर पर होता है तो रोगी किसी को भी मार डालने जैसे आक्रमण करता है। साथ ही यह भी कहता है कि यदि बचना है तो मुझे मिल-जुल कर मार डालो। प्रचलित उपाय भी यही है कि निकटवर्ती ऐस्किमो उसे पकड़ ले जाते हैं और खुले क्षेत्र में ले जाकर वध कर डालते हैं। समझा जाता है कि ऐसा करने वालों से 'हिम दैत्य' प्रसन्न होता है और उन्हें वफादार सहयोगी मानकर पुरस्कार भी देता है।

कनाडा के डाक्टरों ने इस रोग के सम्बन्ध में गहरी छान-बीन की है और उस व्यथा को "विन्डिगो साइकोसिस" नाम दिया है। कुछ समय यह रोग मध्य कनाडा और उत्तरी अमेरिका तक पहुँच गया था। पर अब उसकी रोकथाम के उपाय अपनाये गये हैं तो स्थिति क्रमशः सुधरती जा रही है और घटनाओं का अनुपात कम होता जा रहा है।

मानस रोगों के प्रत्यक्ष कारणों में व्यक्तिगत दुश्चिन्तनों, अरुचिकर सामाजिक प्रचलनों, दबावों को प्रमुख माना जाता है। अब उसी शृंखला में ऐस्किमो सम्पर्क के वैज्ञानिकों ने एक कड़ी और जोड़ी है—चुम्बकीय उभारों द्वारा व्यक्ति विशेष पर पड़ने वाले प्रभावों की। वे कहते हैं ध्रुव क्षेत्र की तरह ही कुछ अन्य क्षेत्र भी ऐसे हो सकते हैं जिनकी भौगोलिक एवं वातावरण सम्बन्धी चुम्बकीय परिस्थिति किन्हीं

पर अतिरिक्त दबाव डाले और उसे इस प्रकार के उन्माद में जकड़ दें।

साइकोलाजिस्टों और एन्थ्रोपोलोजिस्टों के एक वर्ग ने इसे हिस्टीरिया की तरह छूत स्तर का माना है एवं वंशानुक्रम में पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलने वाले रोगों से इस प्रकार के अनेक मानसिक उन्माद खोजे हैं। भूतोन्माद के पीछे यही प्रक्रिया काम करती है। वे सर्वत्र नहीं होते। किसी विशेष क्षेत्र या समुदाय में ही उनकी धूम रहती है। यह व्यथा छूत की तरह एक से दूसरे को लगती है। दुःखती आँखों को देखने भर से अच्छी आँखें भी दुःखने लगती हैं। जुकाम वालों को समीपता से अन्य दुर्बल प्रकृति के लोग भी वैसी ही शिकायत करने लगते हैं। बड़ों को भूत से आक्रान्त देखकर छोटों के मन पर भी यह कुहासा जमने लगता है। जो अनुकूल अवसर मिलने पर फूट निकलता है। जिनके परिवार मुहल्लों में भूत-प्रेतों की घटनायें होती रहती हैं उनमें रहने वाले अन्य दुर्बल मनःस्थिति के लोग भी अनचाहा अनुकरण करते हैं। कोढ़ में खाज की तरह झाड़-फूंक करने वाले और इस मान्यता वालों द्वारा सुनाये जाने वाले कथानकों से प्रभावित ऐसे लोग भी इस व्यथा में फंस जाते हैं, जिनकी मानसिक संरचना में उन्माद प्रकट होने की आशंका नहीं की जाती थी।

मलेशिया की महिलाओं में 'लता' नामक भयाक्रान्त रोग होता है, यदि उनसे आग में हाथ डालने को कहा जाय तो रोगिणी आग में हाथ डाल देगी। 'लता' के आक्रमण होने पर लोगों ने क्या-क्या दुर्व्यवहार उसके साथ किए यह तो उसे याद रहता है। पश्चिमी चिकित्सक इस रोग को हिस्टीरिया, साइकोसिस, न्यूरोसिस अबनमाल कन्वल्शन कहते हैं। मलेशिया में रहने वाली चीनी महिलाओं में यह रोग नहीं होता। ऐसा ज्ञात होता है कि यह रोग परम्परागत होता है जिसकी शुरूआत १८५० में तब से हुई जब से वहां गोरे लोग आये और

उनसे बचने के लिए उन्हें 'लता' रोग ने घेरा। महिलायें पश्चिमी नकल को बाध्य की गयीं। 'लता' मात्र अन्धाधुन्ध नकल की मानसिक दासता का प्रतीक है।

मलेशिया का एक और मानस रोग 'एमोक' बड़ा भयानक है। युवा रोगी विक्षिप्त होकर छुरा भोंकता फिरता है। उसका कारण नौकरी से निकाला जाना या परीक्षा की असफलता आदि होती है। अनेक मनुष्यों को घायल होते होते उस पर काबू पाया जाता है तब तक वह बेहोश होकर गिर पड़ता है। पश्चिमी चिकित्सक इसका कारण बताते हैं—ब्रेन डैमेज, मिर्गी, हिस्टीरिया, या डीलेरियम की स्थिति जिसमें आदमी चित्त भ्रमित हो जाता है। एपीलेप्टिक और हिस्टीरिया वाले रोगी तो विश्व के हर कोने में पाये जाते हैं किन्तु "एमोक" का सम्बन्ध १६ वीं शताब्दी में वहाँ के इतिहास से जोड़ा जाता है जबकि देशभक्त स्वराज्य प्राप्त एमोक पर निकल पड़ते थे और देश के लिए मर मिटने को निकल पड़ते थे। धर्म परिवर्तन के समय वे मरना अधिक पसन्द करते थे। एमोक से मृत व्यक्तियों का सम्मान १८५० तक था। उससे बाद यह मानस रोग माना जाने लगा है। किन्तु रक्त के संस्कार तो बने ही रहते हैं।

विश्व के विभिन्न स्थानों में मानसिक रोग विभिन्न रूप लेते हैं। स्थान की संस्कृति, जलवायु जल प्रभाव तथा परम्परागत अन्ध-विश्वास मानस संस्थान पर छाये रहते हैं। यह बात मात्र पिछड़ी जातियों तक ही अब सीमित नहीं रही वरन् पढ़े लिखे आधुनिक सभ्यता में पले लोगों को भी होती है।

इंग्लैण्ड के एक परिवार में पीढ़ियों से यह मान्यता चली आयी है कि उसका हर नर सदस्य ५० वर्ष की आयु से पूर्व ही मृत्यु को प्राप्त हो जायगा। पिछले दिनों असोशिएटेड प्रेस के माध्यम से २६ अक्टूबर १९८३ के स्टेट्समैन अखबार में एक समाचार छपा कि

सातवें अर्ल ऑफ वेन ने जो गत पाँच वर्षों से आसन्न मृत्यु से भयभीत था, २६ वर्ष की आयु में ही स्वयं को गोली मारकर आत्महत्या कर ली। थामस राबर्ट डगलस ऑफ वन शाही परिवार की सातवीं पीढ़ी के एक मात्र पुरुष सदस्य थे।

कहा जाता है कि इनके पिता ३५ वर्ष की आयु में व दादा मात्र ३७ वर्ष की आयु में नाव में डूबने से अकाल मृत्यु को प्राप्त हुए थे। यही इतिहास परिवार के हर सदस्य का है। गाँव वालों का कहना है कि हैम्पस्टेड मार्शल बर्क शायर नामक इस रियासत के एक बुजुर्ग ने १०० वर्ष पूर्व एक कन्या से दुराचार किया था। उसके बाद यह शाप देकर कि इस परिवार का कोई भी पुरुष सदस्य पचास वर्ष तक जीवित नहीं रहेगा व जब तक जियेगा—अवसादग्रस्त मनःस्थिति में रह कर अन्ततः आत्म-हत्या कर लेगा, उस कन्या ने भी आत्महत्या कर ली। कहा नहीं जा सकता कि यह किम्वदन्ती कितनी सत्य है किन्तु इतिहास यही बताता है कि हर पीढ़ी के पुरुष सदस्यों को 'स्कीजोफ्रेनिया' नामक मानस रोग जन्म से ही रहा व सभी ने आत्म-हत्या की है तथा ४०-४५ वर्ष की वय तक पहुँचने से पूर्व ही काल कवलित हो गए। कुछ लोग इसे एक भय को, आत्म सम्मोहन की स्थिति कहते हैं जिसमें हर व्यक्ति सम्भाव्य को सच मानकर ही जिया है व उसने मानो लोकोक्ति को ही सही सिद्ध करने के लिए आत्म हत्या की है।

एन्थ्रोपोलाजिस्ट चार्ल्स लिन्हाम का कथन है कि पिछड़े क्षेत्रों में पाया जाने वाला यह रोग भूतोन्माद कहा जाता था एवं पीड़ित के प्रति उपेक्षा, व्यंग, उपहास का प्रयोग होता था। अब वह नये रूप से शिक्षित समुदाय में भी नई-नई सनकों और उमंगों के रूप में दृष्टिगोचर होने लगा है। उसे भूतवाद की पुरातन पृष्ठभूमि पर नयी परिस्थितियों के अनुसार उगा नये किस्म का, किन्तु उसी प्रकृति का पौधा माना जा सकता है।

प्रेत बाधा-या भूतोन्माद न उपहासास्पद ठहराया जाय और न उसकी उपेक्षा की जाय। यदि बहानेबाजी पाई जाय तो उसका पर्दाफाश किया जाय किन्तु यदि वस्तुतः कोई व्यथा से आक्रान्त है तो उसे एक मानसिक रोगी की तरह उपचार किया जाय। खोजने पर जैसे अन्य रोगों के समाधान मिल गये उसी प्रकार उसी विक्षेप के निराकरणों का भी युक्ति संगत मार्ग मिल सकता है।

भूत एक भ्रम भी-एक वास्तविकता भी—

वस्तुतः चिरकाल से प्रचलित एवं बहुसंख्य व्यक्तियों से व्यवहृत मान्यताएं मस्तिष्क के चारों ओर एक घेरा बना लेती हैं और एक सच्चाई की तरह प्रतीत होने लगती हैं। मनुष्य की विचार तरंगे पृथ्वी पर छाये आयन मण्डल की तरह ही मस्तिष्क के चारों ओर एक आयडियोस्फियर बना लेती हैं जो अपना प्रभाव सतत् मानवी चिन्तन पर डालता रहता है। वैज्ञानिकों का कथन है कि हर व्यक्ति अपना विचार मण्डल (आयडियोस्फियर) बनाने के लिये पूर्ण रूपेण स्वतन्त्र है। वह मनःशक्तियों को विकासोन्मुख कर सकता है, साथ ही निषेधात्मक विचार प्रवाह उसे पतन के गर्त में ढकेल सकता है। लेकिन इसी आयडियोस्फियर से सम्बन्धित एक और प्रकरण ऐसा है जो दैनन्दिन जीवन क्रम में मानवी व्यवहार में देखने को मिलता है। वह है—कुकल्पनाओं से गढ़ा हुआ विचित्र जगत—जिसमें भूत-पलीत, डायन-चुडैल आदि बसते हैं।

वंश परम्पराओं से विभिन्न समाजों में देवी-देवता पूजे जाते रहते हैं। उनके वंशधर वैसा ही देखते-सुनते रहते हैं जो उन्हें उनके बड़े-बूढ़ों ने बताया है। उनकी कथा-गाथाएं घरों में चला करती हैं। इन कथनोपकथनों से उनके अस्तित्व और क्रिया-कलाप की पुष्टि होती रहती है और फलतः छोटेपन से ही मान्यताओं को इतनी मजबूती से पकड़ लेती हैं कि वे लगभग सच्चाई जितनी गहराई तक मनः क्षेत्र में

अपनी जड़ें जमा लेती हैं। मान्यताएं जड़ें पकड़ लेने पर सच्चाई बन जाती हैं अथवा सच्चाई बहुत दिनों तक कार्यान्वित होते रहने पर लोक-मान्यता बन जाती है, यह कहना कठिन है। सन्देह इसलिये उठता है कि विभिन्न स्थानों पर कितनी ही मान्यताएं एक दूसरे से सर्वथा विपरीत होते हुए भी सच्चाई समझी जाती है। विशेषतया यह बात देवी-देवताओं के सम्बन्ध में—भूत-प्रेतों के सम्बन्ध में विशेष रूप से लागू होती है। अवास्तविकता की ऐसी प्रतिक्रिया जो वास्तविकता से किसी प्रकार कम नहीं होती, आश्चर्यजनक है। साथ ही जिन क्षेत्रों में जो भूत-प्रेत माने या देवी-देवता पूजे नहीं जाते रहे हैं, वहाँ उनके सम्बन्ध में चर्चा की जाय तो उन बातों की मजाक उड़ा दी जाती है और अविश्वास व्यक्त किया जाता है। इसके विपरीत जिन परिवारों में जो देवी-देवता माने या पूजे जाते रहते हैं वहाँ उनके अस्तित्व बारे में सन्देह उत्पन्न करने वाली बात सर्वसाधारण द्वारा उपहास मे उड़ा दी जाती है एवं आक्रमक प्रतिरोध भी किया जाता है।

ऐसी ही और भी कितनी ही मान्यताएं हैं। उदाहरणार्थ जैन धर्म के अनुयायियों के सम्मुख देवताओं द्वारा बलि माँगे जाने और न देने पर रुष्ट होने की बात कदापि गले न उतरेगी इसके विपरीत आदिवासी—वनवासी लोग तनिक-तनिकसी बात की भूल में भूत का आक्रोश समझते और उसके निराकरण के लिए पशुबलि ही एकमात्र उपाय मानते हैं। दोनों ही अपने-अपने पक्ष में इतने कारण प्रमाण प्रस्तुत कर सकते हैं कि अपने स्थान पर दोनों ही सही प्रतीत होते हैं। यदि ऐसा न होता तो अपने क्षेत्र को सही सिद्ध करने के लिए वे इतना जोर ही क्यों देते और विपरीत प्रकट करने पर आक्रोश क्यों व्यक्त करते ?

सत्य क्या है ? अभी तक इसका सही विवेचन नहीं हो सका।

घटा। इस प्रकार यह क्रम पाँच दिनों तक चलता रहा। छठवें दिन किसी कारणवश उसकी पत्नी अपने बच्चों समेत कमरे में ही सो गई। अकेला रामलखन ही छत पर सोया। मध्यरात्रि के करीब फिर वह आकृति प्रकट हुई। इस बार उसने रामलखन को नाम लेकर पुकारा। वह जगा किन्तु लगातार छः दिनों से उसका साक्षात्कार होते-होते रामलखन का भय कुछ कम-सा हो गया था। साहस बटोरकर उसने प्रश्न किया—'तुम कौन हो और क्या चाहते हो ?' आकृति ने जवाब दिया—'मैं किशुन हूँ। कभी मेरा यहाँ मकान था। वर्षों पूर्व एक बरसात में मकान ढह गया और मैं उसी के नीचे दब गया। तभी से मुझे आपका इन्तजार था। मैंने ही यह जमीन खरीदने के लिए आपको प्रेरित किया। अब जब आपने इस जमीन को खरीदकर मकान बना लिया है, मैं आपके सामने उपस्थित हूँ। मेरी मदद कीजिए। मुझे उस स्थान से बाहर निकालिए। बहुत पीड़ा हो रही है। इसके बदले में मैं आपको अपार सम्पदा दूँगा।'

आकृति की गिड़गिड़ाहट पर रामलखन को दया आ गई। उसने पूछा—'आखिर मुझे करना क्या होगा ?' किशुन नामधारी उस आकृति ने पुन. कहा—सामने वाले कमरे के बाँयें कोने में मैं दबा पड़ा हूँ, वहाँ खोदकर मुझे मुक्त करो।' आकृति के आदेशानुसार रामलखन तत्क्षण उठा तथा कमरे का कोना खोदना प्रारम्भ किया। करीब दो फुट खोदने पर उसे एक बाम्बी नजर आयी। बाम्बी के दीखते ही प्रेत के कथनानुसार उसने और खोदना बन्द कर दिया। दूसरे दिन अर्धरात्रि को किशुन फिर आया। उसने सहायता के लिए रामलखन को धन्यवाद ज्ञापन किया एवं एक स्थान का पता बताया। वहाँ खोदने पर रामलखन को ढेर सारे सोने-चाँदी के सिक्के मिले। बाद में उसने जब किशुन के बारे में लोगों से पूछताछ की, तो इसी नाम के एक

अन्तःकरण जैसे-जैसे उदार और निर्मल होता जाता है, वैसे-वैसे सत्य की उदात्त परिभाषा होने लगती है। मान्यताओं का आवरण हट जाता है। किन्तु साथ ही यह बात भी सच है कि यदि अन्तरात्मा का स्तर गिरने लगे, दुष्टता का पक्षधर बनने लगे तो भी कुकर्म करते समय कोई ग्लानि न अनुभव होगी। वरन् वह कार्य हर दृष्टि से सही प्रतीत होने लगेगा। जिनका कार्य प्रतिदिन ढेरों जीवों की हिंसा करते रहना है, उन्हें अपना कार्य कुछ ही समय पश्चात् स्वाभाविक मनोरंजन ही नहीं, उपयोगी भी प्रतीत होने लगता है। वे तब अपने कार्य के पक्ष में ऐसी दलीलें भी देने लगते हैं जिससे तार्किक दृष्टि से अपनी बात का औचित्य भी ठहराया जा सके।

यहाँ चर्चा भूत-पलीतों के सम्बन्ध में हो रही है। जिक्र चल ही पड़ी तो मनुष्य जैसे स्वभाव एवं आकृति-प्रकृति के भूत-पलीतों को भी देवी-देवता कहा जा सकता है। बड़े रूप में देखा जाय तो अति सामर्थ्यवान प्रकृतिगत शक्तियों को भी देवता का रूप दिया जा सकता है—जैसे सूर्य, चन्द्र, पवन, अग्नि, वरुण आदि।

संसार में अनेकों प्रकार की अनेकों क्षेत्रों में अनेकानेक मान्यताएं प्रचलित हैं और उन सभी के अभ्यस्त अनुयायी अपनी बात पर उतना ही जोर देते हैं, मानों पूर्ण सत्य की जिम्मेदारी या ठेकेदारी उन्हीं के हिस्से में आई हो। यदि ऐसा न होता तो धर्म सम्प्रदायों के नाम पर अब तक जो लम्बे समय से भयानक रक्तपात होता रहा है वह क्यों होता? इतनी गुंजाइस या सहनशीलता किसी भी धर्म में नहीं है जो यथार्थता का पता लगाने के लिए अपनी मान्यता को भी एक पक्ष मानने की उदारता बरत सके। हर धर्मावलम्बी अपने मन्तव्य को पूर्ण सत्य और अन्यान्य मतावलम्बियों को भटके हुए मान कर पूर्वाग्रहों से भरकर विवाद क्षेत्र में उतरना चाहता है। यहाँ कठिनाई एक ही है कि पूर्वाग्रहों के आधार पर जमी हुई मान्यता इतनी प्रबल होती है कि अपने सिवाय अन्य किसी के तर्क, तथ्य, प्रमाण

उदाहरण को वह गम्भीरता से लेना नहीं चाहती। फलत: शास्त्रार्थ का कोई निर्णय नहीं निकलता, मात्र वितण्डावाद बनकर रह जाता है।

मूल प्रश्न यह है कि शरीर का अन्त हो जाने के उपरान्त आत्मा का अस्तित्व शरीर के रूप में रहता है या नहीं अथवा शरीर रहते हुए भी कई आत्माएं अपने सूक्ष्म शरीर से असम्भव समझे जाने वाले प्रत्यक्ष क्रिया-कलाप कर सकती हैं या नहीं, इसके लिये तर्क का कौन-सा आधार अपनाया जाय ?

मान्यता का सत्य ही एक विशेष प्रकार का सत्य है, जो लगभग पूर्ण सत्य के समतुल्य ही जा पहुंचता है। हो सकता है कि पुराना मत बदलने पर पूर्वाग्रहयुक्त सभी तर्क गलत प्रतीत होने लगें पर जब तक उन पर हठधर्मिता का आवरण है तब तक तो वे उनकी अपनी दृष्टि में पूर्ण सत्य ही प्रतीत होंगे। न केवल प्रतीत होंगे वरन् परिणाम भी प्रस्तुत करेंगे। यह श्रद्धा का अंश है। श्रद्धा जब सृजनात्मक एवं सघन होती है, तब वह जैसी है, अपने साथ वातावरण, परिस्थितियाँ एवं घटनाएं भी बदलकर रख देती है।

"शङ्का डायन मनसा भूत" की उक्ति पूरी तरह सत्य है। यदि मरघट की समीपवर्ती झाड़ी की मान्यता भूत-चुड़ैलों से जुड़ी हुई हो तो उधर से निकलने पर हिलती हुई पत्तियाँ भी असली डायन की तरह खूंखार प्रतीत होंगी और उस व्यक्ति को भयाक्रांत कर देंगी। मन में भूत उत्पन्न होना भी उतना ही सत्य है। रात्रि के निविड़ अन्धकार में जग रहे व्यक्ति को पूर्व मान्यतानुसार दरवाजों या खिड़कियों का खड़खड़ाना भी भूत द्वारा की गयी गड़बड़ी का प्रमाण देता है। अब तक भूत-प्रेतों के चंगुल में फंसे सहस्रों व्यक्ति जीवन गंवा चुके हैं, तान्त्रिकों के चंगुल में फंसकर धन, स्वास्थ्य एवं मनोबल खो चुके हैं। उनके मिथ्या विश्वास ने उन्हें असली भूत की उपस्थिति की तरह डरा दिया पर वह डर उनकी जान लेकर ही विदा हुआ।

अपने देश में कहीं भी किसी भी निर्दोष महिला पर अपनी कुशंकाओं का आरोपण करके उसे डाकिन, चुड़ैल, जादूगरनी आदि के रूप में भयानक रूप देते देखा जा सकता है। डायनों का अस्तित्व पूर्णतया संदिग्ध है, किन्तु कुशंकाओं के खेल में असंख्यों एक से एक भयानक डाकिनों का उत्पादन निरन्तर होता रहा है। आश्चर्य इस बात का है कि यह मनगढ़न्त डाकिनें हानि उतनी ही पहुँचा देती हैं जितनी कि कोई वास्तविक डायन रही होती और उसने पूरे जोरशोर से आक्रमण किया होता।

'मनसा भूत' की उक्ति में संकेत है कि मन से भूत उत्पन्न होते हैं। पीपल के पेड़ पर, मरघट में, खण्डहरों में भूत-पलीतों के किले बने होने और वहां से उनके तीर चलते रहते रहने की मान्यता असंख्यों अन्धविश्वासियों के मनों में जड़ें जमाये बैठी रहती हैं। सभी जानते हैं कि जड़ों में दौड़ने वाला रस पत्र, पल्लव, पुष्प, आदि के रूप में विकसित होता रहता है। आशंकाजन्य भयभीरुता की जड़ें यदि अचेतन मन में घुस पड़े तो उतने भर से भूतों की अपनी अनोखी दुनिया बन पड़ेगी और उस सेना के आक्रमण की अनुभूति घिग्घी बंधा देने वाला त्रास देती रहेगी। यह स्वनिर्मित भूत भी उतने ही डरावने और हानिकारक होते हैं जितने कि यदि वास्तविक भूत कहीं रहे होते और उनके द्वारा आक्रमण किये जाने पर कष्ट सहना पड़ता।

हिस्टीरिया का एक प्रकार है, 'सामाजिक उन्माद'। इसे भूत-पलीत या देवी-देवताओं के आवेश के रूप में देखा जा सकता है। शिक्षितों में यह आवेश दूसरी कई तरह की सामयिक उमंगों के रूप में आता है और वे अपने आप को क्रोध आदि आवेशों से ग्रसित पाते हैं। कई बार तो ऐसी स्थिति अपने लिए तथा सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों के लिए घातक बन जाती हैं। आवेशग्रस्त स्थिति के साथ रोगी जब भूत-प्रेतों के या देवी देवताओं के आक्रमण के साथ संगति

बिठा लेता है तब वह प्रवाह उसी दिशा में बहने लगता है और ऐसे लक्षण प्रकट होते हैं जिनमें ऐसा प्रतीत होता है मानो सचमुच ही कोई भूत बेताल उन पर चढ़ दौड़ा हो।

'एँक्जाइटी न्यूरोसिस' एवं 'हिस्टीरिक न्यूरोसिस' को झूठा उन्माद तो नहीं कहा जा सकता पर उसकी सहेली या छाया कहने में हर्ज नहीं है। कोई कल्पना जब मस्तिष्क पर असाधारण रूप से हावी हो जाती है तो उसे अनुभूतियाँ भी उसी प्रकार की होने लगती हैं। भूत-प्रेतों के आवेश प्रायः इसी स्थिति में आते हैं। मस्तिष्क में असन्तुलन का दौरा पड़ता है रोगी के मस्तिष्क का एक बहुत छोटा अंश यह अनुमान लगाने की चेष्टा करता है कि इस आकस्मिक हलचल का कारण क्या हो सकता है? उसे दूसरे लोगों पर भूतों का आवेश आने की जानकारी देखने या सुनने से पहले ही मिल चुकी होती है। अस्तु क्षण भर में अपनी स्थिति उसी प्रकार की मान लेने का विश्वास जम जाता है। बस, इतनी भर मान्यता शरीर के हिलने झूमने, गरदन झुलाने, लम्बी साँसें, उत्तेजना आदि भूतोन्माद के लक्षण प्रस्तुत कर देती है।

इसी श्रेणी में देवी-देवताओं के आवेशों की गणना की जा सकती है। भूतोन्माद अधिक अविकसित, अशिक्षित और असंस्कृत लोगों को आते हैं उनमें भय-आक्रोश का बाहुल्य रहता है और हरकतों में तथा वचनों में निम्न स्तर की स्थिति टपकती है। जबकि देवोन्माद में अपेक्षाकृत सज्जनता एवं शिष्टता की मात्रा अधिक रहती है। आवेश एवं वार्तालाप भी ऐसा ही होता है। मानों कोई देव स्तर का व्यक्ति कर रहा हो। जिन लोगों ने देवी देवताओं की चर्चा अधिक सुनी है, स्वयं उस पर विश्वास करते हैं उनका मस्तिष्क आवेश की स्थिति में अपनी कल्पना, साथ ही हरकतें भी उसी स्तर की बना लेता है। वस्तुतः इन आवेशों में देव स्तर सिद्ध करने वाली

पड़ती हैं। भक्त लोगों को उनके इष्ट देव भी ऐसे ही कौतूहलवर्धक परिचय देते हैं।

प्रेतात्मा के नाम पर घटित होने वाली अगणित घटनाओं में से प्रायः आधी ऐसी होती हैं, जिन्हें आवेशग्रस्त मस्तिष्कीय रोग की संज्ञा दी जा सकती है। उन्माद के—स्नायु, दुर्बलता के, भीरुताजन्य, आत्महीनता के दबे असन्तोष की प्रतिक्रिया के कितने ही कारण ऐसे होते हैं जिनसे मनुष्यों की मानसिक स्थिति गड़बड़ा जाती है। उस स्थिति में शरीरगत और मनोगत तनाव बढ़ता है। वह एक प्रकार के कम्पन, रोमांच, ज्वर एवं आवेश जैसा होता है। ऐसा विचित्र रोग पहले अनुभव में नहीं आया था। अस्तु उसकी सीधी तुक प्रेत-आक्रमण से लगा ली जाती है। रोगी के मन में यही मान्यता दृढ़ होती है और दर्शकों, सम्बन्धियों में से अधिकांश प्रेत-उपचार के सरंजाम इकट्ठे करके रोगी भ्रमग्रस्तता को पूरी तरह परिपुष्ट कर देते हैं। आमतौर से प्रेत-आक्रमण इसी स्तर के होते हैं।

संस्कार-जगत में प्रेतात्माओं का आतंक अंकित रहा तो आवेशग्रस्त, रुग्ण व्यक्ति अपनी स्थिति की संगति भूत-प्रेतों, देवी-देवताओं के आक्रमण के साथ बैठकर उसी प्रवाह में स्वयं को बहाने लगता है। इससे ऐसे लक्षण प्रकट होते हैं, मानो सचमुच ही कोई भूत बेताल उस व्यक्ति को दबोच बैठा हो।

भूत वस्तुतः होता है या नहीं, यह शोध का विषय है पर पिछड़े वर्गों में जो भूतोन्माद की बीमारी पाई जाती है उसके मूल में जो कुछ हो उनके मिथ्या विश्वास ही जड़ जमाये बैठे होते हैं, कुछ अवसर आ पड़ने पर आसपास के वातावरण के कारण भूत रूप में उन पर छा जाते हैं। वे ऐसा व्यवहार करने लगते हैं, मानो भूत उन पर सवारी गाँठकर कुछ कहलवा रहा हो या करा रहा हो। यह दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति मिथ्या विश्वास पर अवलम्बित होते हुए भी रोगी

को जीवन भर आतंकित किए रहती है। यह शोधकर्त्ताओं का विषय है कि वे देखें कि कोई भूत था भी या नहीं। केवल विश्वास और पूर्वाग्रह ही स्वसम्मोहित करके रोगीके लिए घातकस्थिति उत्पन्न करने न लगें।

प्रश्न यहाँ शोध का ही नहीं, इसका भी है कि ऐसी स्थिति में फँसे हुए रोगी के प्राण बचाने के लिए क्या किया जाये ? उत्तर एक ही है—कांटे से कांटा निकाला जाय। भूत-प्रेत भगाने वाले कई तरह के उपचार करते हैं व जताते हैं कि भूत को पकड़कर घड़े में या बोतल में बन्द कर दिया गया और उसे कहीं जमीन में गाड़ या जला दिया गया। इससे रोगी को विश्वास हो जाता है कि भूत सचमुच ही नष्ट कर दिया गया एवं उसे राहत मिलती है। यदि रोगी समझदार है और उसे वस्तुस्थिति समझायी जा सकती है तो उसे यह समझाया जा सकता है कि आत्म-विश्वास स्वसम्मोहन कितना जबरदस्त तथ्य है और किसी को भ्रमित कर काया व मस्तिष्क की वह क्या से क्या दुर्गति कर सकती है।

फ्रांस के एक राजा ने मृत्युदण्ड पाए रोगी को मनो-वैज्ञानिक एवं विचित्र ढंग से फांसी दी। उसकी आँखों पर पट्टी बाँध दी गयी एवं एक पात्र से जल टपकाते हुए सुई चुभोकर कहा कि तुम्हारी एक नस काट दी गयी है। जल के गिरने की आवाज को उसने इतना स्वाभाविक समझा कि इतना भर कहे जाने पर कि तुम्हारा रक्त धीरे-धीरे निकल रहा है, वह भयाक्रांत होकर मौत को प्राप्त हो गया। एक व्यक्ति को एक जहरीले साँप ने काटा। जिसने देखा उसने कह दिया जरा-सी खरोंच भर आई है। बात टल गयी। बहुत दिनों बाद उसने भेद खोला कि उसे असली साँप ने काटा था। तुरन्त जहरीले साँप के काटे जाने की स्मृति उसे आई एवं भयभीत हो वह मर गया। जहर के चढ़ने का प्रश्न ही नहीं उठता था। मन्त्र-तन्त्रों में प्रायः प्रयोक्ता का आत्म विश्वास एवं दृढ़ मनोबल ही काम करता है। जिस

पर मन्त्र चलाया जाता है उसका भी प्रयोक्ता पर विश्वास होना चाहिए तभी चमत्कारी परिणाम भी निकलते हैं।

भूत-प्रेत के प्रसंग प्रायः निर्मूल आशंका पर आधारित होते हैं। लेकिन कभी-कभी भूत-प्रेतों का वास्तविक अवतरण भी होता है। कभी-कभी कोई सहानुभूति रखने वाली आत्मा विशुद्ध सहायता की दृष्टि से किसी से सम्पर्क साधती है पर लोग भूत-प्रेत का नाम मात्र सुनकर इतने भयभीत हो जाते हैं कि हितैषी और हानिकारक तक का अन्तर नहीं समझ पाते। परोक्ष जगत के सम्बन्ध में संव्याप्त अज्ञान ही इस भूतोन्माद का कारण है। पिछड़े, अनगढ़, मनकी लोगों की शारीरिक मानसिक अवस्था को सूक्ष्मधारी आत्माओं से अलग समझा जाना चाहिए व अज्ञान को मिटाया जाना चाहिए कि कोई देवी-देवता या भूत-पलीत किसी के ऊपर आते हैं। मस्तिष्क पर छाया अज्ञान ही हिस्टीरिया के उन्माद के रूप में निकलता है। किन्तु यदि उत्कृष्टता के मार्ग पर ले चलने वाली सहायक आत्मायें परोक्ष जगत से आदान-प्रदान का क्रम स्थापित करना चाहेंगी तो सदैव श्रेष्ठ परामर्श के रूप में वह प्रकट होगा, चाहे उसे अदृश्य होने के कारण देखा या समझा न जा सके एवं अविज्ञात या मात्र संयोग का नाम दे दिया जाय।

क्रमशः सुलझती ये गुत्थियाँ--

मरणोत्तर स्थिति के सम्बन्ध में अनुसंधानकर्त्ताओं का कथन है कि जीव चेतना जिस प्रकार जीवित स्थिति में अपनी अनेकानेक आवश्यकताओं की तथा समस्याओं की पूर्ति करती रहती है उसी प्रकार वह स्वसंचालित पद्धति से मरणोत्तर स्थिति में भी स्थिति के अनुरूप तालमेल बिठा लेती है।

ग्रहण विसर्जन के उपक्रम आये दिन चलते रहते हैं। उनमें से कोई भी कष्टकारक नहीं होता है। अन्न, जल, और श्वास को ग्रहण

करने का क्रम निरन्तर चलता रहता है। इसी प्रकार मल विसर्जन का कार्य अनेक छिद्रों द्वारा स्वतः सम्पन्न होता रहता है। करवट लेने और कपड़ा बदलने में कोई कष्ट नहीं होता। एक घर से दूसरे घर में प्रवेश करने—एक सड़क छोड़कर दूसरी पर चलने में जब कोई कष्ट नहीं होता और सामान्य अभ्यास ही उन कार्यों को निपटा लेता है तो फिर शरीर-त्याग के समय कष्ट होने की बात समझ में नहीं आती।

जरा-जीर्ण होने पर अंगों की गतिशीलता में व्यवधान आने पर होने वाला कष्ट अलग बात है। चोट लगने या बीमार पड़ने की व्यथा का अपना ढंग और स्वरूप है। उसे मरण के साथ नहीं जोड़ा जाना चाहिए। मरण से पूर्व रुग्णता एवं जीर्णताजन्य कष्ट होते हैं उन्हें जीवन में आते रहने वाले उतार-चढ़ावों में ही सम्मिलित रखना चाहिए। मरणकाल की स्थिति और रुग्णता की व्यथा को एक-दूसरे से सर्वथा पृथक समझना ही उचित है।

मरने के समय मस्तिष्क समेत सभी अवयव काम बन्द कर देते हैं। ऐसी दशा में कष्ट की अनुभूति का भी कोई तुक नहीं। यह कार्य उसी प्रकार का है जैसा कि आग का बुझ जाना। ऐसी दशा में मरण-काल का कष्ट पीड़ा परक नहीं हो सकता है। मोह के कारण बिछोह से तिलमिलाहट होना तो बात दूसरी है।

मरने के बाद स्वभावतः दूसरे स्तर का जीवनयापन करने की व्यवस्था होनी चाहिए। प्रकृति ने हर जीवधारी के शरीर, मन और साधनों का ऐसा संतुलन बिठाया है कि वह उस परिधि में रहकर बिना खिन्नता अनुभव किए अपनी जीवनचर्या चलाता रहे। यदि ऐसा न होता तो एक भी प्राणी न स्वयं चैन से रहता न दूसरों को रहने देता। देखा जाता है कि सभी जीवधारी अपनी-अपनी परिस्थितियों में सुखपूर्वक निर्वाह करते हैं। शरीर छोड़ने के लिए सहमत नहीं होते। वरन् ऐसा कुछ सामने होने पर उससे बचने का प्रयास

करते हैं ताकि उपलब्ध सुख-सुविधा से विरत न होना पड़े। मरणोत्तर काल में भी चेतना के लिए नियति ने ऐसी ही व्यवस्था बना रखी होगी जिसमें वह जब तक उस स्थिति में रहे तब तक बिना किसी कठिनाई के समय गुजार सके।

जन्म और मरण की मध्यवर्ती अवधि की चेतना विज्ञानी विश्राम की अवधि मानते हैं। बहिरंग मस्तिष्क को तो नींद लेकर थकान मिटाने का अवसर मिल जाता है पर शरीर यात्रा के लिए मूलतः उत्तरदायी अचेतन मन को कभी भी चैन नहीं मिलता। निद्रा काल में भी अचेतन मन के क्रिया-कलाप जारी रहते हैं। स्वप्न लोक में वह विचरण करता रहता है और समूचे शरीर को, समस्त क्रिया-कलापों को अनवरत रूप से सम्भालता रहता है। रक्त संचार, श्वास-प्रश्वास, निमेष, उन्मेश आकुंचन-प्रकुंचन आदि में अचेतन मन में निद्रावस्था में भी उतना ही सक्रिय रहना पड़ता है जितना कि जागृत स्थिति में। ऐसी दशा में यही कहा जा सकता है कि चेतना को समुचित विश्राम का अवसर जीवनकाल में कभी मिलता नहीं। उसके लिए मरणोत्तर काल का अवसर ही एक मात्र सुयोग है। ऐसी दशा में जीवात्मा को इन दिनों इतनी सुविधा मिलनी चाहिए जिसमें वह बिना किसी विक्षेप के थकान मिटा सके और भविष्य के लिए नई स्फूर्ति अर्जित कर सके।

इस सम्बन्ध में कई मनोविज्ञानियों, डाक्टरों ने गहरी खोज की है। उनने मरणासन्न रोगियों की मनोदशा शारीरिक स्थिति, बातों तथा संकेतों के आधार पर निष्कर्ष निकाला कि उन पर क्या बीत रही है वे परिवर्तन से कैसा अनुभव कर रहे हैं।

इसके अतिरिक्त इन शोधकर्त्ताओं ने विशेष रूप से उनके साथ सम्पर्क साधा जो मृतक घोषित कर दिये गये थे। पर कुछ समय बाद उनकी चेतना लौट आई और इस मध्यकाल के अनुभव बता सकने की

स्थिति में थे। ऐसे शोधकर्त्ताओं द्वारा एकत्रित किए गये प्रमाण तथा निकाले गये निष्कर्ष सामान्यजनों की जिज्ञासा के समाधान में बहुत कुछ सहायता करते हैं।

वर्जिनिया मेडीकल कालेज के प्रोफेसर डा० इयान स्टीवेन्सन का निष्कर्ष है कि मृत्यु अनचाही अतिथि है। तो भी वह डरावनी नहीं है। वह एक परिवर्तन भर है, जिन्हें प्रवास के आनन्द की स्मृति है उन्हें यह भी जानना चाहिए कि मरणोत्तर जीवन में आत्म सत्ता बनी रहती है और वह विश्रान्ति के लिए नियति व्यवस्था के अनुरूप ऐसी परिस्थितियाँ मिलती हैं जिसमें थकान उत्तर सके और भविष्य के लिए स्फूर्ति मिल सके।''

वस्तुतः मृत्यु इसी प्रकार है, जैसे पके फल को प्रकृति उस पेड़ से उतार लेती है। इसलिए कि उसका परिपुष्ट बीज अन्यत्र उगे और नये वृक्ष के रूप में स्वतन्त्र भूमिका सम्पादन करे। वृक्ष से अलग होते समय वियोग की, दुलहिन के पतिगृह में प्रवेश करने की तैयारी नहीं है। क्या बिछुड़न की व्यथा में मिलन की सुखद संवेदना छिपी नहीं होती? इन विदाई के क्षणों को दुर्भाग्य कहें या सौभाग्य? मृत्यु को अभिशाप कहें या वरदान? इस निर्णय पर पहुँचने के लिए गहरे चिन्तन की आवश्यकता पड़ेगी।

मरण के कन्धों पर बैठ कर हम पड़ोस की हाट देखने भर जाते हैं और शाम तक फिर घर आ जाते हैं। मृत्यु के बाद भी हमें इसी नीले आसमान की चादर के नीचे रहना है। अपनी परिचित धूप और चाँदनी से कभी वियोग नहीं हो सकता। जो हवा चिरकाल से गति देती रही है, उसका सान्निध्य पीछे भी मिलता रहेगा दृश्य पदार्थ और सम्बन्धी अदृश्य बन जायेंगे इससे क्या हुआ? दृश्य भोजन उदरस्थ होकर अदृश्य ऊर्जा बन जाता है, इसमें घाटा क्या रहा

सम्बन्धियों की सद्भावना और अपनी शुभेच्छा का आदान-प्रदान जब बना ही रहने वाला है, तो सम्बन्ध टूटा कहाँ ? इस परिवर्तन भरे विश्व में जीवन और मरण के विशाल समुद्र में हम सब प्राणी क्रीड़ा-कल्लोल कर रहे हैं। इस हास्य को रुदन क्यों मानें ? किसी सन्त ने कहा है "श्मशान को देखकर कुड़कुड़ाओ मत। यह नव-जीवन का उद्यान है। उसमें सोई आत्माएं मधुर सपने संजो रही हैं,ताकि विगत की अपेक्षा आगत को अधिक समुन्नत बना सकें। लोगो, डरो मत। यहां मरता कोई नहीं सिर्फ बदलते भर हैं और परिवर्तन सदा से रुचिर माना जाता रहा है। रुचिर के आगमन पर रुदन क्यों ?

यह सामान्य स्थिति की बात हुई। पर असामान्य स्थिति में मरने वाले लोगों की मनःस्थिति जब विपन्न होती है तो उन्हें मरने के समय बिछोह, पाश्चात्ताप के अतिरिक्त अपनी विवशता पर भी खेद होता है और आँखों से आँसू बहाते हुए बिलखते हुए मरते हैं। ऐसे अनुभव उन पादरियों के मुँह से सुने गये हैं जिनके पास मरणासन्न स्थिति में निर्धारित धर्मकृत्य कराने के लिए जाना पड़ता रहा है। उनमें से सन्तुलित मनःस्थिति वाले तो प्रसन्नचित्त रहे किन्तु विक्षुब्ध प्रकृति वालों को व्याधिजन्य कष्ट की अनुभूति न होते हुए भी मृत्यु के क्षणोंमें घबराते और रुदन करते पाया गया।

प्रेत प्रभाव के दो कारणों की चर्चा की जा चुकी है, एक मृतात्माओं की उद्विग्न एवं आक्रामक सत्ता। दूसरे मनोरोगों के सन्दर्भ में प्रेत कल्पना की प्रतिक्रिया। इन दो के अतिरिक्त एक तीसरा कारण और भी है। किन्हीं विशिष्ट व्यक्तियों की निजी चेतना में ही ऐसे उभार उत्पन्न हो जाते हैं जो भूतों की करतूत जैसे विलक्षण परिचय देने लगते हैं। यह व्यक्तित्व में विशिष्ट ऊर्जा का आकस्मिक उदय होना कहा जा सकता है। वही अपने समीपवर्ती क्षेत्र को प्रभावित

फरती है। इससे दर्शकों को लगता है यहाँ कोई प्रेतात्मा विद्यमान है और अपने अस्तित्व का परिचय देने के लिए उलट-पुलट कर रही है।

भूत जो सचमुच मा होते हैं वे मात्र अपने अतीत की अनुगूंज होते हैं। अपनी वासना-तृष्णा एवं आकांक्षा की आग से वे स्वयं ही जल रहे होते हैं। वे वस्तुतः अतीत की भूलों का फल भुगत रहे होते हैं और उनसे मुक्त होने केलिए छटपटा रहे होते हैं। अभ्यास कौतूहल या संस्कारवश वे अपनी गतिविधियों का प्रदर्शन करने को उद्यत होते भी हैं तो उसमें डरने जैसी क्या बात है ? वे तो दया के ही पात्र होते हैं और मुक्ति की कामना करते रहते हैं। जो अपने वर्तमान में जी रहा है, ऐसे मनुष्य को किसी के 'भूत' से डरना शोभा नहीं देता। वे बस 'भूत' ही तो हैं।

जिनने निराशा, दुर्बुद्धि एवं दुष्टता से घिरी मनःस्थिति एवं परिस्थिति में जीवन गुजारा है उन पर इसी स्तर के स्वप्न मरणोत्तर जीवन में छाये रहते हैं। यह अपना रचा नरक है जो जीवित रहते भी दीखता है और शरीर छोड़ने के उपरान्त भी। स्वर्ग और नरक भी अपने इसी संस्कार की तरह अदृश्य प्रकृति का कोई घटक हो सकता है पर इसमें किस द्वार से प्रवेश किया जाय यह पूर्णतया अपनी आदतों पर निर्भर रहता है।

प्रेतों के सम्बन्ध में किये गये परामनोविज्ञान अनुसंधानों से भी ऐसा ही पता चला है कि उद्विग्न मनःस्थिति ही मरणोत्तर समय पर मनुष्य को आक्रोशग्रस्त रखती है। एक जैसा जीवन व्यतीत करते रहे लोगों के बीच भी प्रेत जीव में पाई गई भारी भिन्नता का कारण यह समझा गया है कि किसी दण्ड पुरस्कार के अन्तर्गत नहीं वरन्

उन्हे अपने ही स्वभाव संस्कार के आधार पर उन दिनों सुख-दुःख को अनुभव होता रहता है। अस्तु प्राणी की निजी मनःस्थिति को ही परलोक में उपलब्ध होने वाली भली-बुरी परिस्थितियों का निमित्त कारण माना जा सकता है। आधुनिक मनोवैज्ञानिक भी इस तथ्य को अब स्वीकार ने लगे हैं जबकि पूर्वात्त अध्यात्म दर्शन तो प्रारम्भ से ही इस मान्यता का पक्षधर रहा है।

मुद्रक— युग निर्माण प्रेस मथुरा।